ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमत ज्ञान

फाल्गुन-चेत, संवत् नानकशाही 551-52

वर्ष 13 अंक 7 मार्च 2020

मुख्य संपादक : सिमरजीत सिंघ

संपादक : सतविंदर सिंघ फूलपुर

सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	10 रुपये
आजीवन (देश)	100 रुपये
सालाना (विदेश)	250 रुपये
प्रति कापी	3 रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी

(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर साहिब- 143006

फोन : 0183-2553956-60

एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

ISSN 2394-8485

विषय-सूची

गुरबाणी विचार 4

संपादकीय 6

दूजा रबाबी मरदाना 8
-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ

होली से होला-महल्ला 12
-स. निरवैर सिंघ अरशी

शक्ति, साहस और गौरव का प्रतीक : होला-महल्ला 14
-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'

शहीद भाई सुबेग सिंघ-भाई शाहबाज सिंघ 17
-सिमरजीत सिंघ

. . . सरदार बघेल सिंघ करोड़सिंघिया 22
- स. किरपाल सिंघ

अकाली फूला सिंघ 27
- स. गुरदेव सिंघ

कृतघ्न 31
-सतविंदर सिंघ फूलपुर

भुखिआ भुख न उतरी 37
-डॉ. परमजीत कौर

स्त्री-सशक्तिकरण और श्री गुरु ग्रंथ साहिब 41
-डॉ. जसविंदर कौर

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री के विविध रूपों की महिमा 49
-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल

सिध गोसटि : विचार व्याख्या 51
-डॉ. मनजीत कौर

श्री गुरु नानक देव जी (कविता) 56
-स. करनैल सिंघ सरदार पंछी

खबरनामा 57

गुरबाणी विचार

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा ॥
संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा ॥
जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा ॥
इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा ॥
जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा ॥
सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा ॥
जिनी राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा ॥
हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना ॥
चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा ॥२ ॥ *(पन्ना १३३)*

पंचम सतिगुरु श्री गुरु अरजन देव जी महाराज बारह माहा मांझ की इस पावन पउड़ी में चेत्र मास की ऋतु और इससे संबंधित क्रियाओं के बारे में सांकेतिक वर्णन करते हुए मनुष्य-मात्र को मनुष्य जीवन रूपी वर्ष के इस काल खंड को प्रभु-नाम-चिंतन-मनन द्वारा सफल करने का निर्मल उपदेश देते हुए गुरमति मार्ग बख्शिश करते हैं।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि चेत्र मास में मालिक परमात्मा को स्मरण किया जाए तो बहुत ही गहरी प्रसन्नता मिलती है। इस समय यदि जिह्वा से अच्छे मनुष्यों की संगत करते हुए प्रभु-नाम जपा जाए तो मालिक स्वामी प्राप्त हो जाते हैं। जिसने ऐसा सुकर्म कर प्रभु को पा लिया है उसी मनुष्य का इस संसार में आना सफल गिना जाए, चूंकि मनुष्य-जीवन का मूल प्रयोजन यही है :

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ *(पन्ना १२)*

गुरु पातशाह हरेक क्षण प्रभु-नाम को समर्पित करने का दिशा-निर्देश बख्शिश करते हुए फरमान करते हैं कि परमात्मा की पावन समृति के बगैर यदि एक पल भी जीया जाए तो सारा जीवन ही व्यर्थ हो जाता है। जो परमात्मा जल में, आकाश में, धरती पर व्याप्त हो रहा है, यदि ऐसा मालिक मनुष्य को याद ही न आए तो उसका कितना दुर्भाग्य होगा! दूसरी ओर जिन्होंने परमात्मा को याद किया है वे बहुत ही भाग्यशाली अथवा महान हैं। ऐसे सुजनों को देखकर मन

परमात्मा के दीदार की इच्छा की कामना करता है, मन में उसके दीदार की प्यास बनी रहती है। चेत्र मास में जो मुझको परमात्मा से मिला दे मैं उसके चरण छू लूँ!

बारह माहा मांझ की पहली पावन पउड़ी, जिससे यह पावन बाणी प्रारंभ होती है, इस प्रकार है :

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम॥
चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम॥
धेनु दुधै ते बाहरी कितै न आवै काम॥
जल बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम॥
हरि नाह न मिलीऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम॥
जितु घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम॥
स्रब सीगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम॥
प्रभ सुआमी कंत विहूणीआ मीत सजण सभि जाम॥
नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु॥
हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिस का निहचल धाम॥१॥ *(पन्ना १३३)*

अर्थात् हे परमात्मा! हम अपने कर्मों की कमाई के अनुसार अर्थात् सुकर्मों को निभाने में कुछ कमी रह जाने के कारण आपसे बिछड़े हुए हैं। सनम्र विनती है कि आप अपनी कृपा कर हमें अपने साथ मिला लो। चारों दिशाओं में भटकने के उपरांत हम अंत में आपकी शरण में आए हैं। दूध देने से रहित गाय किसी काम नहीं आती। जल न मिले तो वृक्ष अथवा पौधा सूख जाता है। यदि असल मित्र-प्रभु का नाम ही न मिल पाया तो आराम कहां? जिस हृदय रूपी घर में प्रभु-पति नहीं प्रकट होते वह हृदय रूपी घर भट्ठी जैसा दुखदायक प्रतीत होता है। प्रभु मालिक के बिना मनुष्य रूपी स्त्री का सारा श्रृंगार व्यर्थ है अथवा बाहरी दिखावे के सभी प्रयास निष्फल हैं। मालिक के बिना बाहरी रूप से मित्र दिखने वाले सभी जन शत्रु हैं। ऐसी स्थिति में हृदय से एक ही विनती निकलती है कि हे स्वामी! कृपा कर अपना नाम बख्श दो। हे मालिक! मुझे अपने साथ मिला लेना, क्योंकि एक आप ही का नाम सदैव स्थिर है।

संपादकीय

धरम हेत साका जिनि कीआ

सिक्ख धर्म की स्थापना मानवता के मध्य परस्पर ईर्ष्या, नफ़रत और ज़ुल्म-ओ-सितम को ख़त्म कर स्वस्थ समाज की सृजना करने, धर्म के नाम पर प्रचलित फोकट कर्मकांडों को ख़त्म कर मानव-जीवन के परम उद्देश्य— जीवात्मा और परमात्मा के मिलन का आसान मार्ग दर्शाने हेतु अकाल पुरख के दैवी मिशन के तौर पर 'नानक निर्मल पंथ' के रूप में हुई। गुरु साहिबान ने इसी रूहानी मिशन के अंतर्गत मानवता में प्रचलित जात-पांत के भेदभाव, धक्केशाही, अन्याय, ज़ुल्म इत्यादि बुराइयां पैदा करने वालों को रूहानी गुरबाणी के माध्यम से झकझोरा। समय आने पर श्री गुरु अरजन देव जी ने शहादत दी और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने समय की ज़रूरत के अनुसार इस धरती पर से ज़ुल्म का नाश करने के लिए शस्त्रबद्ध संघर्ष शुरू किया। श्री गुरु तेग़ बहादर जी ने धर्म की आज़ादी की ख़ातिर शहादत दी। इसी राह पर चलते हुए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपना पूरा परिवार कुर्बान कर दिया। ज़ुल्म के विरुद्ध संघर्ष की इस परंपरा को खालसा पंथ ने आगे चलाते हुए लासानी इतिहास की सृजना की।

सारांश रूप में चाहे तत्कालीन धर्मों की कमियों से संबंधित गुरबाणी में दी गई झकझोरना की बात हो, चाहे शहादत की और चाहे शस्त्रबद्ध संघर्ष की, इन सबका उद्देश्य एक ही है— समाज को वहमों, भ्रमों, पाखंडों से मुक्त कराना, मानवता के लिए धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि हर प्रकार की आज़ादी के समर्थक बनना और एक ही परमात्मा का नाम जपना व जपवाना। किसी विशेष धर्म के साथ विशेष लगाव या किसी विशेष धर्म के साथ विरोध यह कभी भी गुरु-घर की परंपरा नहीं रही। मसला केवल हक, सच और न्याय का रहा है। हम देखते हैं कि श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक गुरु-घर के मुसलमान श्रद्धालुओं की सूची बहुत लम्बी है और दूसरी तरफ़ गुरु-घर के इर्ष्यालुओं में भारतीय बहुसंख्यक वर्ग की फिहरिस्त भी बहुत ज़्यादा लम्बी है।

धर्मों पर राजनीति करने वाले कुछ पंथ तथा मानवता-विरोधी ताकतें अपने सदियों पुराने नफ़रत के अजेंडे के अंतर्गत सिक्ख संघर्ष को किसी एक विशेष धर्म के हक में और दूसरी तरफ़ किसी विशेष धर्म के विरोध में खड़े कर अपने भद्दे मंसूबे साकार करने के प्रतत्नों में कार्यशील हैं।

पाकिस्तान एक मुस्लिम देश है। सिक्ख धर्म के पवित्र स्थान— गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब, गुरुद्वारा श्री करतारपुर साहिब तथा अन्य बहुत-से गुरुधाम पाकिस्तान में स्थित हैं। इसके लिए भले की बात यह है कि सिक्ख-मुस्लिम भाईचारा सदा कायम रहे। पंथ-विरोधी ताकतों द्वारा सोची-समझी साजिश के अंतर्गत पिछले कुछ अरसे से भारतीय फ़िल्म इंडस्ट्री के माध्यम से मुसलमानों के अंदर सिक्खों के प्रति

नफ़रत पैदा करने के अजेंडे वाली फ़िल्में तैयार करवा कर देश-विदेश में दिखाई जा रही हैं। दूसरी तरफ़ देश के बहुसंख्यक लोगों के अंदर मुस्लिम लोगों के विरुद्ध नफ़रत प्रकट करने वाली फ़िल्में भी अब लगातार आ रही हैं। जब दुश्मन शातिर हो तो ज़्यादा चौकन्ने रहने की ज़रूरत होती है।

अप्रैल २०२१ में श्री गुरु तेग़ बहादर जी की ४०० वर्षीय प्रकाश उत्सव की शताब्दी आ रही है। इस अवसर पर पंथ-विरोधी ताकतें श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब जी की शहादत को एक धर्म विशेष की रक्षा हेतु दी गई शहादत बता कर, जहां सिक्ख गुरु साहिबान को हिंदू धर्म के रक्षक साबित कर उनके रूहानी मिशन को संकुचित करने का यत्न करेंगी तथा गुरु साहिब के मानव-हितैषी होने के रुतबे को छोटा कर उनके मात्र राष्ट्र-हितैषी अर्थात् राष्ट्रवादी होने की बात करेंगी, वहीं इस शहादत को सिक्ख-मुस्लिम नफ़रत के संयोग के तौर पर भी पेश कर इस बात की चीख-चीख कर दुहाई देंगी, परन्तु हमने सचेत रहना है।

श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब की शहादत को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने धर्म की रक्षा के लिए दी गई शहादत बताया है— *''धरम हेत साका जिनि कीआ॥ सीसु दीआ पर सिररु न दीआ॥''* गुरबाणी व्याकरण के अनुसार 'धर्म' का 'म' मुक्ता बहुवचनी अक्षर है, अर्थात् यह शहादत किसी विशेष धर्म के लिए नहीं, बल्कि धर्म की आज़ादी के लिए दी गई शहादत थी। गुरु जी ने धक्के से किसी पर अपना धर्म थोपने के विरोध में यह साका किया था। गुरु साहिब का रूहानी मिशन किसी एक धर्म या देश तक सीमित नहीं था, उनका मिशन तो *''परगट भए गुरु तेग बहादर॥ सगल स्रिसटि पै ढाकी चादर॥''* के अनुसार सारी मानवता को परिरंभण में लेने वाला था। यह गुरमति संकल्प का मिशन था। *''तिलक जंञू राखा प्रभ ता का''* तत्कालीन कारण था। उस समय तिलक-जंञू (जनेऊ) की जगह किसी और धर्म पर भीड़ पड़ी होती तब भी गुरु साहिब ने धर्म की ख़ातिर शहादत देनी थी। नानक निर्मल पंथ की विचारधारा की निरंतरता में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने मिशन को *''धरम चलावन संत उबारन॥ दुसट सभन को मूल उपारन॥''* के माध्यम से प्रकट किया है।

श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब जी की प्रकाश-शताब्दी के अवसर पर होने वाले सेमिनारों में पढ़े जाने वाले पर्चों, लेखों आदि के माध्यम से बुद्धिमान लेखक साहिबान और गुरमति समागमों में प्रचारक साहिबान यही बताने का यत्न करें कि गुरु साहिबान का संघर्ष जुल्म और बुराई के ख़िलाफ़ था, न कि किसी विशेष धर्म या संप्रदाय के। इस अवसर पर यह प्रचार भी ज़रूरी है कि श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब जी ने धर्म की आज़ादी की खातिर अपनी शहादत दी थी, जिसका आज देश में हनन हो रहा है। श्री गुरु तेग़ बहादर साहिब जी का आ रहा ४०० वर्षीय प्रकाश पर्व मनाते हुए देश-समाज के अंदर एकता-इत्तफ़ाक, भाईचारा, भ्रातृ-भाव, धार्मिक सहनशीलता पैदा कर हम गुरु साहिब की खुशियां हासिल कर सकेंगे।

—सतविंदर सिंघ फूलपुर

मो : 99144-19484

दूजा रबाबी मरदाना

*-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ**

तांबा एक धातु है जिसमें रांगा, जस्ता अथवा सीसा मिला देने पर अलग-अलग धातु बन जाती है। वही तांबा जब पारस से मिलता है तो सोना बन जाता है। उसी तांबे को पूरी तरह पिघला कर जब भस्म बना देते हैं तब वह भस्म अनेक रोगों की औषधि के रूप में काम आती है। गुरु साहिबान के समकालीन विद्वान् भाई गुरदास जी ने कहा कि जैसी संगत होती है वैसे ही गुण प्रकट होते हैं। भाई गुरदास जी ने कहा कि मनुष्य यदि साधसंगत करता है तो उसे सहज अवस्था प्राप्त होती है और मन परमात्मा से जुड़ जाता है। इससे उसके मन के विकार दूर हो जाते हैं और परमात्मा के लिये प्रेम की भावना उत्पन्न होती है। उसके अंतर में ब्रह्म-ज्ञान का प्रकाश होता है जिसमें वह लीन हो जाता है। साधसंगत करने वाला मनुष्य असीम आनन्द को प्राप्त होता है। जिसे वाहिगुरु की संगत और कृपा मिले वह परम अवस्था को प्राप्त हो जाता है— *"पारस होइ मनूरु मिलि कागहु परम हंसु करवाए।"* ऐसा सौभाग्य किसी-किसी को ही मिलता है— *"ते विरले सैंसार विचि गुरु सिख गुरु सिख सेव करंदे।"* गुरु-संग और गुरु-कृपा का जो सौभाग्य भाई मरदाना जी को प्राप्त हुआ वह अपने आप में उदाहरण बन कर इतिहास में सुशोभित हो गया। सम्भवत: यही कारण था कि भाई गुरदास जी की लेखनी ने श्री गुरु नानक साहिब के साथ दूसरा स्थान भाई मरदाना जी के लिए सदा के लिए सुरक्षित कर दिया— *"इकु बाबा अकाल रूपु दूजा रबाबी मरदाना।"* जब भी श्री गुरु नानक साहिब का स्मरण होता है, भाई मरदाना जी का सन्दर्भ आना अवश्यम्भावी हो जाता है। श्री गुरु नानक साहिब की शरण में आने से पहले वे साधारण व्यक्ति थे। श्री गुरु नानक साहिब के संग और श्री गुरु नानक साहिब की कृपा ने उन्हें परम अवस्था का अधिकारी बना दिया :

मनूरै ते कंचन भए भाई गुरु पारसु मेलि मिलाइ ॥
आपु छोडि नाउ मनि वसिआ भाई जोती जोति मिलाइ ॥ (पन्ना ६३८)

भाई मरदाना जी कई दृष्टि से सौभाग्यशाली थे। एक तो यह कि उनका जन्म भी उसी गांव राय भोय की तलवंडी में हुआ था जहां दस वर्ष बाद श्री गुरु नानक साहिब का प्रकाश हुआ था। उनके पिता का नाम भाई बदरू जी और माता का नाम बीबी लक्खो जी था। दूसरा सौभाग्य उनका श्री गुरु नानक साहिब के साथ सबसे लंबा साथ था। वे चारों उदासियों (धर्म प्रचार-यात्राओं) में निरंतर गुरु साहिब के साथ रहे और गुरु साहिब द्वारा उच्चरित बाणी के प्रथम साक्षी बने। वे गुरु

*ई-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन : ९४१५९-६०५३३ , ८४१७८-५२८०९

साहिब की लगभग सारी धर्म-चर्चाओं और घटनाओं के भी साक्षी रहे, जिनसे संसार के धर्म-मंडल का परिदृश्य बदल गया और समाज में नई चेतना जागृत हुई। इतिहासकारों के अनुसार पहले उनका नाम दाना था जो उनके माता-पिता ने रखा था। 'मरदाना' नाम उन्हें श्री गुरु नानक साहिब ने दिया था। भाई मरदाना जी के परलोक-गमन के बाद उनका अंतिम संस्कार स्वयं गुरु नानक साहिब ने किया था।

श्री गुरु नानक साहिब के प्रति समर्पण, प्रेम और आज्ञाकारिता से भाई मरदाना जी ने इतिहास में जो स्थान बनाया है उससे उन्हें रबाबी या संगी के रूप में ही नहीं, आदर्श सिक्ख के रूप में भी देखा जाता है। वे श्री गुरु नानक साहिब के सच्चे सिक्ख थे, जिनमें एक श्रेष्ठ सेवक भी नज़र आता है और एक विनम्र शिष्य भी। उनमें श्री गुरु नानक साहिब के बताये मार्ग पर चल कर भक्ति करने वाला परमात्मा का एक श्रद्धालु भी दिखाई देता है और सच का दृढ़ता से साथ देने वाला चैतन्य पुरुष भी। श्री गुरु नानक साहिब के प्रेम-भाव में दो दशकों से अधिक समय तक परिवार से दूर उनके साथ धर्म प्रचार-यात्राओं पर रहना एक बड़ा त्याग था जो विलक्षण कहा जायेगा। श्री गुरु नानक साहिब की यात्राएं आज के समय जैसी सुविधापूर्ण नहीं थीं। वे दुर्गम से दुर्गम रास्तों पर गये। कठिन चढ़ाइयां चढ़ पर्वतों की चोटियों पर पहुंचे। नदियां, समुद्र , घने जंगल,पहाड़ पार किये। उन्हें अपने समर्पण और प्रेम की परीक्षाओं से निरंतर गुजरना पड़ा। श्री गुरु नानक साहिब ने उन्हें कई बार परिवार के पास लौट जाने को भी कहा, किन्तु भाई मरदाना जी हर परीक्षा में पास होते गये। इसी के साथ ही श्री गुरु नानक साहिब की उनके ऊपर कृपा बढ़ती गई। गुरु की कृपा जीवन कैसे बदलती है, यह बात भाई मरदाना जी की जीवन-कथा में से श्री गुरु अरजन साहिब के निम्न वचनों के माध्यम से समझने में सहायता मिलती है :

सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल ॥
सेवक कउ गुरु सदा दइआल ॥
सिख की गुरु दुरमति मलु हिरै ॥
गुर बचनी हरि नामु उचरै ॥
सतिगुरु सिख के बंधन काटै ॥
गुर का सिखु बिकार ते हाटै ॥
सतिगुरु सिख कउ नाम धनु देइ ॥
गुर का सिखु वडभागी हे ॥ *(पन्ना २८६)*

श्री गुरु नानक साहिब भाई मरदाना जी पर सदा ही कृपा करते रहे और उनका पूरा ध्यान रखा। भाई मरदाना जी और उनके परिवार की श्री गुरु नानक साहिब के परिवार से निकटता इस तथ्य से ही उभर कर सामने आती है कि जब श्री गुरु नानक साहिब सुलतानपुर लोधी में वेईं नदी-स्नान के तीन दिन बाद पुनः प्रकट हुए तो महिता कलिआण दास जी ने भाई मरदाना जी को ही तलवंडी से उनकी कुशलता का समाचार लाने के लिये भेजा था। सुलतानपुर लोधी आना भाई मरदाना जी के जीवन को बदल देने वाला सिद्ध हुआ। यहां जब भाई मरदाना जी ने श्री गुरु नानक साहिब के दर्शन किये तो उनके ही होकर रह

गये। उनके मन में गुरु साहिब के लिये प्रेम की ऐसी गहरी भावना उत्पन्न हुई कि सदा के लिये उनकी सेवा में बने रहने का दृढ़ संकल्प मन में धारण कर लिया। श्री गुरु नानक साहिब ने जब संसार को सच का उपदेश देने और परमात्मा से जोड़ने के लिये धर्म प्रचार-यात्रा पर निकलने का निर्णय लिया तो भाई मरदाना जी ने उनके साथ चलने की इच्छा व्यक्त की। गुरु साहिब ने उन्हें बताया कि यह सरल नहीं है, कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है, परिवार से दूर रहना होगा, जिसका मोह त्यागना सहज नहीं है, किन्तु भाई मरदाना जी अपने निश्चय पर अटल रहे। उन्हें तो गुरु साहिब में पूरे ब्रह्मांड के दर्शन हो रहे थे। इस आलौकिक सत्ता से दूर रहने की बात वे सोच भी नहीं सकते थे। गुरु साहिब की कृपा से उन्हें जीवन का उद्देश्य समझ आ गया था। भाई मरदाना जी के लिये वाद्य-यंत्र रबाब की व्यवस्था भी गुरु साहिब ने स्वयं की। भाई मरदाना जी का संगीत अब सांसारिक उद्देश्यों से हट कर परमात्मा के लिये हो गया। सांसारिक मोह-माया के बंधन टूट गये और विकार जाते रहे। श्री गुरु नानक साहिब की महान कृपा से भाई मरदाना जी उस आत्मिक अवस्था को प्राप्त हो गये, जिसके लिये संत, महात्मा, ऋषि, मुनि पूरा जीवन जप-तप में लगा देते हैं। धर्म प्रचार-यात्राओं में जहां भाई मरदाना जी की श्री गुरु नानक साहिब के लिये अपार श्रद्धा व प्रेम निरंतर प्रकट होता दिखाई देता है वहीं श्री गुरु नानक साहिब का भाई मरदाना जी के लिये स्नेह, प्रतिपालन-भाव की धारा भी अनवरत बहती नज़र आती है। भाई मरदाना जी की हर सुविधा का ध्यान गुरु साहिब रखते और उसे पूर्ण करते हैं। वे भाई मरदाना जी की हर इच्छा का सम्मान करते हैं और पूरा आदर देते हुए अपने साथ लेकर चलते हैं। भाई मरदाना जी भी निर्मल हृदय से गुरु साहिब की शरण व कृपा पाना चाहते हैं। वे अपनी हर शंका, दुविधा निःसंकोच व्यक्त करते हैं और गुरु साहिब से उसका समाधान, निदान प्राप्त करते हैं। श्री गुरु नानक साहिब ने भाई मरदाना जी को जीवन का मर्म इतनी सूक्ष्मता से समझाया कि उनका अंतर ब्रह्म-ज्ञान से प्रकाशित हो गया।

भाई मरदाना जी के बारे में कथित साखियों से जो सोच बनती है कि वे भूख से विह्वल हो जाते थे, उसका भरपूर खंडन गुरबाणी में मिलता है। भाई मरदाना जी को तो ज्ञान की भूख थी जो श्री गुरु नानक साहिब पूरी कर रहे थे। उन्होंने कहा कि परमात्मा का ज्ञान सबसे श्रेष्ठ है, जैसे गुड़ का स्वाद मीठा होता है। आत्मिक तृप्ति का यही एक साधन है। मनुष्य का हित और संतुष्टि तो इसमें है कि उसे परमात्मा का यश गायन करने की लगन लग जाये। इसके साथ ही जब परमात्मा के हुक्म में रहना आ जाये तो वैसी तृप्ति होती है जैसा लोग मनपसंद भोजन खाकर आनन्दित होते हैं :

गिआनु गुड़ु सालाह मंडे भउ मासु आहारु ॥
नानक इहु भोजनु सचु है सचु नामु आधारु ॥

(पन्ना ५५३)

भाई मरदाना जी के जीवन-वृत्तांत के अनुसार यही सच्चा भोजन है जो परमात्मा के लिये

विश्वास पैदा करता है। जिसे इस भोजन का रस आ जाये उसे सारे सांसारिक रस फीके लगने लगते हैं। उसे जीवन को सार्थक बनाने वाले गुणों की पहचान हो जाती है। शुभ गुण उसके अंदर दृढ़ होने लगते हैं। इससे वह विकारों और माया के प्रभाव से मुक्त हो जाता है— "सतसंगति सिउ मेलापु होइ लिव कटोरी अंम्रित भरी पी पी कटहि बिकार॥"

भाई मरदाना जी में यह सैद्धांतिक परिपक्वता तो आनी ही थी। जिस पर वाहिगुरु की कृपा हो जाये वह सोना तो बनता ही है। भाई मरदाना जी की रबाब से निकली धुन आत्मिक मंथन से निकली धुन थी। जब धुर की बाणी का उच्चारण हो रहा हो तो उसके साथ इलाही संगीत भी जुड़ जाता है। उन्हें यह भी सौभाग्य मिला कि वे श्री गुरु नानक साहिब के दूत भी बन कर रहे। एक बार जब पहली धर्म प्रचार-यात्रा पूरी कर श्री गुरु नानक साहिब तलवंडी पहुंचे तो गांव के बाहर ही रुक गये थे। उस समय भाई मरदाना जी गांव में गये, किन्तु अपने घर न जाकर पहले श्री गुरु नानक साहिब के घर गये। वे श्री गुरु नानक साहिब की प्राथमिकताओं को अपने से पहले रखते थे। यह सच्चे दूत, मित्र, हितैषी और भक्त का प्रमुख गुण होता है। उन्होंने श्री गुरु नानक साहिब में परमात्मा के दर्शन कर लिये थे। अपना जीवन गुरु साहिब के हुक्म के अनुसार ढाल लिया था। गुरु साहिब के हुक्म का पालन करना उनका धर्म बन गया था। भाई मरदाना जी जब वर्षों बाद अपने परिवार से मिलने गये तो उनकी पत्नी व बच्चे भावुक हो उठे। उन्होंने भाई मरदाना जी को घर में ही रुक जाने के लिये अनेक यत्न किये किन्तु जब गुरु साहिब ने अगली यात्रा पर निकलने की तैयारी की तो भाई मरदाना जी बिना किसी दुविधा के उनके साथ हो लिये थे। वे गुरु नानक साहिब को समर्पित होने का आनन्द अनुभव कर चुके थे।

भाई मरदाना जी को श्री गुरु नानक साहिब की बाणी कंठस्थ थी, जिसे वे रबाब बजा कर संगत को सुनाया करते थे। इस दृष्टि से उन्हें गुरु-घर का प्रथम कीर्तनिया होने का भी मान प्राप्त है। वे गुरबाणी के मर्म को जान चुके थे, इसी कारण उनकी रबाब से निकलने वाली धुनों में गुरबाणी के अनुरूप ही पवित्रता होती थी, जो सामान्य संगीत से अलग थी।

भाई मरदाना जी वृद्ध हो चुके थे। जब उनका अंतिम समय आया तो श्री गुरु नानक साहिब ने उनकी इच्छा जाननी चाही। उनका अंतिम संस्कार कैसे किया जाये और क्या कोई मकबरा बनाया जाये तो भाई मरदाना जी ने कहा था कि जब मेरी आत्मा ही तन से अलग हो जायेगी तो इसे पत्थरों से ढकने का क्या अर्थ! श्री गुरु नानक साहिब ने प्रसन्न होकर कहा कि भाई मरदाना जी तुमने जीवन का भेद जान लिया है। श्री गुरु नानक साहिब ने भाई मरदाना जी का अंतिम संस्कार स्वयं कर उन्हें अपनी कृपा का सबसे बड़ा पात्र बनने का सौभाग्य दिया। किसी सिक्ख का सबसे बड़ा सौभाग्य होता है कि उसका जीवन उसके गुरु के साथ जुड़ जाये।

होली से होला-महल्ला

*-स. निरवैर सिंघ अरशी**

होली भारत का प्रसिद्ध, प्राचीन एवं प्रतीकमयी त्योहार है, जो देश भर में भारी उत्साह, उमंग और उल्लास से मनाया जाता है। इस त्योहार की आरंभता हिरण्यकश्यप के समय से मानी जाती है।

होलिका की कुटिलता की पराजय और प्रहलाद की विजय की खुशी में लोग झूम उठे और होलिका का उपहास करना शुरू कर दिया। इस तरह होलिका की सारे संसार में भारी निंदा हुई। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ष इस दिन लोग इकट्ठा होते और धूल-मिट्टी उड़ाते थे। समय बीतने के साथ रंग और फिर कीचड़ आदि फेंकने की प्रथा भी चल पड़ी। दशहरे की भांति होली का त्योहार भी सच्चाई और नेकी की निर्माणकारी शक्तियों की कूड़ व बदी की विनाशकारी ताकतों पर हुई दिग्विजय का प्रतीक है।

'होली' का दूसरा नाम 'फाग' है अर्थात् फाल्गुन माह या बसंत ऋतु। बसंत ऋतु उमंगों व खुशियों भरा त्योहार है, जिसके आध्यात्मिक एवं अंतरीय भाव को श्री गुरु अरजन देव जी इस प्रकार कथन करते हैं :

गुरु सेवउ करि नमसकार॥
आजु हमारै मंगलचार॥
आजु हमारै महा अनंद॥
चिंत लथी भेटे गोबिंद॥१॥
आजु हमारै ग्रिहि बसंत॥
गुन गाए प्रभ तुम्ह बेअंत॥१॥ रहाउ॥
आजु हमारै बने फाग॥
प्रभ संगी मिलि खेलन लाग॥
होली कीनी संत सेव॥
रंगु लागा अति लाल देव॥ *(पन्ना ११८०)*

अर्थात् गुरसिक्खों की आध्यात्मिक मंडलों की आनंदमयी होली का अज़ब नज़ारा बांधा गया है और मनुष्य को नाम रूपी रंग में रंगे जाने के लिए प्रेरित किया गया है।

चेत वदी एकम को मनाया जाने वाला होला-महल्ला त्योहार खालसा पंथ के सृजक श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की निजी तथा मौलिक खोज है और यह खालसा पंथ को आपकी अद्वितीय देन है। गुरु जी ने अनुभव कर लिया था कि होली का त्योहार खुशियों एवं उमंगों का त्योहार है, मगर इसे मनाने के ढंग-तरीके बहुत बिगड़ चुके हैं। एक-दूसरे पर गंदगी उछाली जाने लगी थी। कभी-कभी इस कारण गाली-गलौच तक की नौबत भी आ जाती थी। यही कारण था कि ऐतिहासिक महत्व होने के बावजूद भी भारतीय त्योहार भारतीय जीवन के निर्माण में कोई ठोस एवं शक्तिशाली योगदान नहीं दे रहे थे।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी जैसी महान अनुभवी शख्सियत, जिसने अपनी ज़िंदगी के कुछ वर्षों में समूचे भारत की कायाकल्प करनी थी, उपरोक्त सामाजिक गिरावट से कैसे अनभिज्ञ रह सकती थी? आपने समय की नब्ज को पहचानते हुए त्योहारों को मनाने के ढंग-तरीके ही बदल दिये। पहले १७५६ बिक्रमी की वैसाखी वाले दिन आपने खालसा पंथ की साजना की, जिसका परिणाम यह हुआ कि वैसाखी का अति खुशियों भरा दिन खालसे के प्रकट-दिन के रूप में मनाया जाने लगा और इससे अगले ही वर्ष से होली

*यूको बैंक बिल्डिंग, नवीं आबादी, श्री अनंदपुर साहिब, जिला— रूपनगर-१४०११८, फोन : ९८८८६-३६४१३

के त्योहार को होला-महल्ला के रूप में मनाने की परंपरा जारी की। पहला होला-महल्ला वर्ष १७५७ बिक्रमी, चेत्र वदी एकम वाले दिन श्री अनंदपुर साहिब में होलगढ़ स्थान पर मनाया गया और वचन किया :

औरन की होली मम होला।
कहयो क्रिपानिधि बचन अमोला।

(गुरुपद प्रेम प्रकाश कृत बाबा सुमेर सिंघ)

जैसे रोज़ाना इस्तेमाल होने वाली कच्ची शब्दावली की जगह खालसे को आक्रामक एवं प्रभावशाली शब्द दिये गये हैं, बिलकुल वैसे ही खालसे को 'होली' की जगह 'होला-महल्ला' मनाने का आदेश है। कवि निहाल सिंघ ने इस बारे में बहुत सुंदर छंद लिखा है :

बरछा, ढाल, कटारा, तेगा, कड़छा, देगा, गोला है।
छका प्रसादि, सजा दसतारा,
अरु कर दौना टोला है।
सुभट, सुचाला, अर लक्ख बाहा,
कलगा, सिंघ सचोला है।
अपर मुछहिरा, दाढ़ा जैसे, तैसे होला बोला है।

गुरु साहिब के आदेशानुसार इस अवसर पर दूर-दूर से सिंघ शूरवीर तथा सिक्ख संगत होला-महल्ला मनाने हेतु श्री अनंदपुर साहिब एकत्र होने लगी। भारी दीवान सजते और कथा-कीर्तन के समागम होते। मेले का विशेष कार्यक्रम अस्त्रों-शस्त्रों के तरह-तरह के करतब दिखाना होता। सिंघ अश्व-दौड़, गतकाबाजी, नेज़ाबाजी, तीरंदाजी आदि कार्यक्रमों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेते। खालसा फौज को दो दलों में बांटा जाता और इनकी एक प्रकार की मसनूई (बनावटी) लड़ाई करवाई जाती। विजेता दल को इनाम-सम्मान दिया जाता। खालसा फौज का नगर कीर्तन निकलता तो गुलाल, गुलाब, कसतूरी आदि की बरसात की जाती। नगर के गली-बाज़ार और सिंघों के वस्त्र आदि लाल रंग में इतने रंग जाते कि चारों तरफ रंगीनियां ही नज़र आती और सुगंध फैल जाती। हजूरी कवि भाई नंद लाल जी एक ऐसे ही होला-महल्ला का जिक्र अपनी फारसी पुस्तक 'दीवानि-गोया' की गज़ल नंबर ३२ में इस प्रकार करते हैं :

गुले होली ब बागे दहिर बू करद।
लबे चूं गुंचह रा फरखंदह खू करद।
गुलाबो, अंबरो, मुशको, अबीरो,
चु बारां बारशे अज़ सू बसू करद।
ज़हे पिचकारीए पुर ज़ाफरानी,
कि हर बेरंग रा, खुस रंगो बू करद।
गुलाल अफशानी अज़ दसते मुबारक,
ज़मीनो आसमां रा सुरखरू करद।
दु आलम गशत रंगीं अज़ तुफैलश,
चु शाहम जामह रंगीं दर गुलू करद।

इन शेरों में स्पष्ट जिक्र है कि गुलाब, अंबर, कसतूरी व अंबीर सब तरफ बारिश की तरह बरसने लगे। केसर से भरी पिचकारी ने सबके सफेद वस्त्रों को सुंदर रंग में रंग दिया और सतिगुरु जी ने अपने हाथों से गुलाल उड़ा-उड़ा कर धरती एवं आकाश को गहरा लाल कर दिया।

होला-महल्ला त्योहार विशेषतः श्री अनंदपुर साहिब और श्री हजूर साहिब नांदेड़ में मनाया जाता है। दोनों गुरुधामों पर लाखों की संख्या में सिक्ख संगत एकत्र होती है और हजूरी दीवानों (कीर्तन-दरबार) की हाज़िरी भरने के अलावा निहंग सिंघों के प्रदर्शन का भी लुत्फ उठाती है। श्री हजूर साहिब नांदेड़ में विशेष घोड़े, जो कि महल्ले के नगर कीर्तन का नेतृत्व करते हैं, संगत का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित करते हैं। इस प्रकार झूलते निशान साहिब और शबद-कीर्तन करती भजन-मंडलियां वायुमंडल को आकर्षक व सुहावना बना देती हैं। गतका पार्टियां अपने अद्वितीय प्रदर्शन द्वारा मन मोह लेती हैं। ये सचखंडी नज़ारे देख कर प्रत्येक के मुंह में से स्वतः धन्य गुरु! धन्य गुरु! की आवाज़ निकलती है।

शक्ति, साहस और गौरव का प्रतीक : होला-महल्ला

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

'होला' अरबी भाषा का शब्द है और 'महल्ला' शब्द फारसी भाषा का। इन दोनों शब्दों का मिलाजुला अर्थ हुआ— 'हमला और जाए हमला'। 'होली' शब्द 'होलिका' शब्द से उद्धृत हुआ है और यह शब्द हिंदी भाषा की खड़ी बोली में बोला जाता है। होलिका राजा हिरण्यकश्यप की बहन थी। भक्त प्रहलाद इसी राजा का बेटा था। होली का त्यौहार होलिका-दहन से संबंधित है। हिंदू धर्म में मनुष्य को चार वर्णों— ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र में बांट दिया गया। इसी तरह इन चार वर्णों के लिए चार मुख्य त्यौहार भी निश्चित कर दिए गए। ब्राह्मणों के लिए वैसाखी, क्षत्रियों के लिए दशहरा, वैश्यों के लिए दीवाली और शूद्रों के लिए होली का त्यौहार। केवल दशहरा पर्व पर ही अस्त्रों की प्रदर्शनी आयोजित की जा सकती थी। हिंदू धर्म में एक कथा प्रचलित है कि भक्त प्रहलाद को परमात्मा ने हिरण्यकश्यप के अत्याचारों से बचा लिया था और उसकी बुआ होलिका परीक्षा के समय अग्नि में जलकर भस्म हो गई थी। असहायों के लिए यह दिन उत्साह का दिन था। इस दिन भक्त प्रहलाद की रक्षा करने हेतु प्रभु ने अपनी शक्ति (लीला) द्वारा अग्नि का स्वभाव बदल दिया था।

इसी तरह अकाल पुरख की कृपा से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'होली' का स्वभाव बदल कर इसे 'होला-महल्ला' में तबदील कर दिया। उन्होंने यह भी दिखा दिया कि अस्त्र-शस्त्र केवल एक श्रेणी के लिए नहीं होते, ये सबके लिए होते हैं। सिंघों के लिए शस्त्रधारी होना तो उन्होंने अनिवार्य किया हुआ है। दशमेश पिता जी ने यह सिखला व दिखा दिया कि अस्त्रों-शस्त्रों का उचित उपयोग कैसे किया जाता है तथा अच्छी तरह वार कैसे किया जाता है। वे श्री अनंदपुर साहिब में अपनी फौज को दो दलों में बांटकर होला-महल्ला वाले दिन सचमुच का युद्ध करवाते। विजेताओं को पुरस्कार प्रदान करते। होला-महल्ला वाले दिन युवक अपने सिर (स्वयं को) उनके चरणों में भेंट करते और धर्म, सच एवं न्याय के लिए कुर्बान होने का प्रण लेते।

होला-महल्ला मनाने का मंतव्य सिंघों में 'फतह' (विजय) के अनुभव को और अधिक दृढ़ करवाना था। खालसा पंथ त्यौहारों को अपनी पहचान के साथ जोड़कर तथा त्यौहारों की सार्थकता सिद्ध करने के लिए विलक्षण ढंग से इन्हें मनाता है, जैसे होली को होला-महल्ला, वैसाखी को खालसा पंथ-सृजना दिवस और दीवाली को बंदी छोड़ दिवस। होला-महल्ला मनाने की शुरूआत श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री अनंदपुर साहिब में होलगढ़ नामक स्थान पर की थी। श्री गुरु तेग बहादर जी की लामिसाल शहादत के बाद देश के लोगों में, खास तौर पर सिक्ख संगत में नया उत्साह, हौसला, जोश और निर्भयता भरने हेतु कलग़ीधर पिता जी ने नये आदेश जारी किए। उन्होंने होली मनाने के पारंपरिक ढंगों से हटकर होला-महल्ला विलक्षण रूप से मनाने की परंपरा आरंभ की

*बी-एक्स-९२५, संतोखपुरा, हुशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४; फोन: ९८७२२-५४९९०

और इस त्यौहार को बुलंदी प्रदान करने हेतु नए अर्थ दिए।

दशमेश पिता जी ने समाज के दबे-कुचले और शोषित लोगों में उनके अपने अस्तित्व तथा आत्मसम्मान को महसूस करवाने हेतु, उनमें जोश, निडरता, आत्मविश्वास भरने हेतु, उन्हें शूरवीर, योद्धा बनाने के लिए खालसा पंथ की स्थापना (सृजना) की। उन्होंने खंडे-बाटे का अमृत और होली की जगह होला-महल्ला को प्रचलित किया। सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त करने हेतु, जुल्म के विरुद्ध जूझने की भावना पैदा करने हेतु दशम पातशाह जी ने लोगों में जागृति पैदा की। भारतीय समाज के नव-निर्माण हेतु रीति-रिवाज़ों तथा त्यौहारों को मनाने वाले ढंगों में बहुत ही शानदार बदलाव किए। होली मनाते समय लोग हुड़दंग, हो-हल्ला मचाते थे। एक दूसरे पर रंग, कीचड़ आदि फेंककर तथा नशों का सेवन कर मर्यादाहीन काम करते थे। इस तरह वे अपनी ऊर्जा व गौरव को नष्ट करते थे। समाज को नई दिशा देने हेतु और होली से संबंधित बुराइयों को खत्म करने के लिए युगदृष्टा, युगपुरुष, महान रहबर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'होली' का कायाकल्प करते हुए इसे 'होला-महल्ला' का शानदान रूप प्रदान कर दिया।

कलगीधर पिता जी अपने खालसा को युद्ध-विद्या में प्रवीण व निपुण बनाना चाहते थे। उन्होंने परंपरागत होली को परिवर्तित कर इसका संबंध शूरवीरता, बहादुरी के साथ जोड़ दिया। महल्ला एक प्रकार का दोस्ताना युद्ध है। पैदल तथा घुड़सवार शस्त्रधारी सिंघ दो जत्थे बनाकर निर्धारित की गई हमले की जगह पर एक-दूसरे पर दोस्ताना हमला करते हैं और अनेक प्रकार के युद्ध-कर्त्तव्य, युद्ध-कला का कौशल दिखलाते हैं। देखने वाले तमाम लोग दंग रहकर दांतों तले उंगली दबा लेते हैं। उनके रौंगटे खड़े हो जाते हैं। अपने समय में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी स्वयं ऐसे युद्ध की निगरानी करते थे और दोनों जत्थों (दलों) को आवश्यक शिक्षा प्रदान करते थे। विजयी जत्थे को सजाए गए दीवान में सिरोपाओ बख्शिश करते थे। सजे हुए दीवान में कथा-कीर्तन होता। वीर रस वाली वारें गाई जातीं। सैन्य-अभ्यास के महत्त्व को बताया जाता। हर तरफ चढ़दी कला का उत्साहपूर्ण माहौल बना रहता। गुरु जी सभी का उत्साह बढ़ाते। संगत गुरु जी के रंग में रंग जाती।

श्री अनंदपुर साहिब की पावन भूमि पर होला-महल्ला के दोस्ताना युद्धों ने भारतीय लोगों के मनोबल को ऊंचा उठाने का उत्कृष्ट काम किया। कायरता भरी मनोवृत्ति से छुटकारा पाकर लोग इस महान् उत्सव में, ज़िंदगी के जश्न में पूरे जोशो-खरोश के साथ और शस्त्रों से सज-धजकर शामिल होने लगे। ज़िंदगी के ऐसे जश्न अब भी जारी हैं।

सरबंसदानी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा आरंभ किया गया त्यौहार 'होला-महल्ला' शक्ति, साहस, निर्भयता को प्रकट करने का और गौरव के अनुभव को व्यक्त करने का अद्भुत ढंग है। यह खालसा पंथ की आन, बान और शान को शानदार तरीके से पेश करता है। यह खालसा पंथ के लिए स्वाभिमान तथा चढ़दी कला (विजय की भावना) का प्रतीक है। होला-महल्ला सिक्खों को दृढ़ निश्चयी बनाता है। आत्मविश्वास बढ़ाने और आत्मसम्मान की रक्षा करने के, हुनर सिखलाता है। गुरु-घर के प्रति निष्ठा, आस्था एवं समर्पण की भावना को उजागर करता है। जुल्म, अधर्म, कुरीतियों, बुराइयों और अन्याय के विरुद्ध जूझने के लिए प्रेरित करता है। मानव से महामानव बनने का नाम है— होला-

महल्ला। जोश, जज़्बे, ऊर्जा और उत्साह का नाम है— होला-महल्ला। यह पवित्र त्यौहार यह प्रेरणा देता है कि मांगने पर अधिकार नहीं मिलते, बल्कि ताकत से प्राप्त करने पड़ते हैं। प्रत्येक वर्ष लाखों की संख्या में देश-विदेश से आकर सिक्ख श्रद्धालु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की पावन विरासत एवं परंपरा के साक्षी बनने हेतु श्री अनंदपुर साहिब, श्री पाउंटा साहिब, श्री हजूर साहिब, श्री दमदमा साहिब, तलवंडी साबो तथा अन्य स्थानों पर अति उत्साह व जोश से यह पवित्र त्यौहार मनाते हैं। दीवान सजते हैं। निहंग सिंघों के जत्थों, अन्य जत्थों एवं संस्थाओं द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की छत्र-छाया और पांच प्यारों के नेतृत्व में आलौकिक नगर कीर्तन सजाए जाते हैं। श्रद्धा, आस्था और निष्ठा का सागर बहने लगता है। घुड़सवारी व गतकाबाज़ी के हैरतअंगेज़ कारनामे देखने योग्य होते हैं। होला-महल्ला की महिमा का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। गुरु का खालसा होली नहीं खेलता, होला खेलता है, महल्ला निकालता है। पंथ-कवि स. सुमेर सिंघ श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आदेशों को इन शब्दों में बयान करते हैं :

औरन की होली मम होला।
कहयो किरपानिध बचन अमोला।

होला-महल्ला की महानता का पता इस तथ्य से भी चलता है कि जब सन् १८८९ ई. में खालसा दीवान लाहौर ने पांच सिक्ख सार्वजनिक छुट्टियों की मांग की, तब सरकार ने दो छुट्टियों की ही स्वीकृति दी। एक श्री गुरु नानक देव जी के प्रकाशोत्सव की तथा दूसरी होला-महल्ला की।

होला-महल्ला के पावन और ऐतिहासिक उत्सव के अवसर पर निहंग सिंघों की शमूलियत इसे शुद्ध व अमीर विरासत के रूप में कायम रख रही है। संपूर्ण खालसाई वेश में सजे निहंग सिंघ युद्ध-कौशल दिखाते हुए संगत के लिए उच्च आदर्श पेश करते हैं और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा शुरू की गई युद्ध-रीति को बाकायदा जारी रख रहे हैं। गुरु जी ने होली के स्थान पर होला-महल्ला का सिद्धांत एवं संकल्प पेश किया और इसे उत्कृष्ट व क्रांतिकारी स्वरूप भी प्रदान किया।

गुरबाणी में होली के लिए 'फाग' शब्द का भी उपयोग किया गया है। फाल्गुन सुदी ११ से १५ तक आम लोग फाग (होली) खेलते हैं और हो-हल्ला, हुड़दंग, मचाते हैं। कई लोग मर्यादाहीन व्यवहार भी करते हैं। कई नशों का सेवन करते हैं। कई राह चलते लोगों व युवतियों को परेशान करते हैं। उन्हें फाग के महत्व व औचित्य का बिलकुल पता नहीं होता। हमारे गुरु साहिबान ने उत्तम फाग का संदेश व उपदेश इस प्रकार बख़्शिश किया है :

आजु हमारै बने फाग॥
प्रभ संगी मिलि खेलन लाग॥
होली कीनी संत सेव॥
रंगु लागा अति लाल देव॥ (पन्ना ११८०)

हमारी युवा पीढ़ी में कई लोग महान् सिक्ख विरासत और इतिहास से अपरिचित हैं। वे गौरवशाली रिवायतों से मुंह मोड़ रहे हैं। उनमें पारंपरिक अस्त्रों व शस्त्रों के प्रति प्यार कम होता जा रहा है। वे बाणी एवं बाणे की महानता, उच्चता, शुचिता को जानने-समझने की कतई कोशिश नहीं करते हैं। होला-महल्ला का पावन और महान उत्सव जहां एक ओर खालसा पंथ की विलक्षण व न्यारी पहचान को, अनूठे व अनुपम अस्तित्व को दर्शाता है, वहीं यह हमारी लामिसाल विरासत एवं संस्कृति से संसार को अवगत भी करवाता है। यह हम सबके लिए महान् प्रेरणा का स्रोत है।

शहीद भाई सुबेग सिंघ-भाई शाहबाज सिंघ

-*सिमरजीत सिंघ**

भाई सुबेग सिंघ का जन्म पश्चिमी पंजाब के लाहौर जिले की चूहणीआं तहसील के जंबर गांव के निवासी राय भागा (संधू) के घर हुआ। आजकल जंबर गांव पाकिस्तान के पंजाब राज्य के जिला कसूर का गांव है, जो लाहौर-मुलतान सड़क पर फेरू से आगे छांगा मोड़ पर आबाद है। इस गांव को पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के पावन चरणों का स्पर्श प्राप्त है। इस गांव में गुरु साहिब बहिड़वाल से चलकर पहुंचे थे। यहां गुरु साहिब ने भाई किदारा, भाई समधू, भाई मखंडा, भाई तुलसा, भाई लालू आदि सिक्खों को चरण-पाहुल देकर गुरसिक्खी प्रदान की थी। इस गांव में गुरु जी की आमद की याद में गुरुद्वारा थंम्ह साहिब सुशोभित है। भाई सुबेग सिंघ का घराना सरकारी ठेकेदारी का काम करता था। ये अरबी-फारसी भाषा के उच्च विद्वानों में गिने जाते थे। सरकार में इनका अच्छा मान-सम्मान था। भाई सुबेग सिंघ को इनके पिता जी ने अच्छी तामील हासिल करवाई। इन्होंने भी अपने पूर्वजों की तरह सरकार से ठेके लेकर अपना काम बड़ी ही मेहनत तथा ईमानदारी से करना शुरू किया। भाई सुबेग सिंघ भजन-बंदगी करने वाले तथा अच्छे आचरण वाले व्यक्ति थे। सिक्खों के मन में इनका बहुत आदर-सत्कार था।'श्री गुर पंथ प्रकाश' में ज़िक्र है:

तुरक उसे खालसो वल तोरैं,
खालसा भी तिस को भल लोरैं।
कोई तुरकन परै ज़रूरी काम,
तौ उस भेजैं कर कर सलाम।

भाई सुबेग सिंघ के घर भाई शाहबाज़ सिंघ ने जन्म लिया। जब भाई शाहबाज़ सिंघ की आयु शिक्षा ग्रहण करने योग्य हो गई तो इन्हें पढ़ने के लिए लाहौर की एक मसजिद में भेजा गया। भाई शाहबाज़ सिंघ बहुत ही सूझवान थे। इन्होंने सिक्ख धर्म एवं सिक्ख इतिहास के बारे में जानकारी अपने माता-पिता से प्राप्त की।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहीदी के बाद सिक्ख बहुत कठिनाइयों में समय काट रहे थे। सिक्खों पर हुकूमत का कहर टूट पड़ा था। हज़ारों ही निर्दोष सिक्खों को असहनीय यातनाएं देकर शहीद किया जा रहा था। सिक्खों के सिरों के दाम लगाकर उनका नामो-निशान मिटाने के लिए ढिंढोरा पीटा जा रहा था। जब सिक्खों पर यह भयानक समय चल रहा था तो उस समय कुछ इसलामिक वर्ग भी राजनीतिक

**मुख्य संपादक व उप सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर। फोन : ९८१४८-९८२२३*

नीतियों से तंग-परेशान थे। फलस्वरूप कई रियासतों के सैयदों ने बगावत कर दी। बादशाह फरुख्सियर इस बगावत को दबाने में व्यस्त हो गया। यह सिक्खों के लिए सुनहरी मौका था। वे जंगलों-पहाड़ों में से निकल कर मैदान में आकर अपने गुरु-घरों की सेवा-संभाल करने लग गए। सिक्खों ने १७८१ बिक्रमी (१७२४ ई.) की वैसाखी श्री अमृतसर में बड़ी धूमधाम से मनाई, जिसमें भारी इकठ्ठ हुआ। इस समय के दौरान सिंघों की भाई तारा सिंघ वां की जत्थेदारी में शाही फौज के साथ झड़प हुई, जिसमें भाई तारा सिंघ वां शहीदी प्राप्त कर गए। इसके बाद सिंघों ने शाही फौज़ पर यकायक हमले करने शुरू कर दिए। सिंघों के यकायक हमलों से तंग आकर १७३३ ई. में ज़करिया खान ने सिक्खों पर सख्ती करने के बारे में तथा अपनी मुश्किलों सम्बंधी पत्र लाहौर से दिल्ली के बादशाह को लिख भेजा। उसने भाई सुबेग सिंघ की सलाह से सुझाव लिखा कि सिक्खों को जागीर दे दी जाये तथा उनके किसी आदमी को नवाब चुनकर साथ मिला लिया जाये। बादशाह ने ज़करिया खान की सलाह मान ली।

ज़करिया खान ने सिक्खों के साथ संधि करने के लिए एक लाख रुपए की जागीर, नवाबी का खिताब, खिलअत, नज़राने आदि देने का फैसला किया। इस काम के लिए भाई सुबेग सिंघ को अपना अधिवक्ता बनाकर श्री अमृतसर खालसे की कचहरी में भेजा। श्री अकाल तख्त साहिब के संरक्षण में इकट्ठा हुए खालसा पंथ ने यह सब कुछ स्वीकार करने से इनकार कर दिया, जैसे 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में जिक्र है :

हम को सतिगुर बचन पातिशाही,
हम को जापत ढिग सोऊ आही ॥३६ ॥
हम राखत पातिशाही दावा,
जां इतको जां अगलो पावा।
जो सतिगुर सिक्खन कही बात,
होगु साई नहिं खाली जात ॥३७ ॥

भाई सुबेग सिंघ के बार-बार कहने तथा समझाने पर सिक्खों ने नवाबी लेनी कबूल कर ली। अधिकांश सिक्ख अपने नाम पर नवाबी लेने के लिए तैयार नहीं थे। अंत में सब सिक्खों ने प्रस्ताव पारित कर स. कपूर सिंघ फैजलपुरिया को नवाब की पदवी लेने के लिए कहा। स. कपूर सिंघ ने खालसे की आज्ञा से पांच सिंघों के चरणों को नवाबी की खिलअत स्पर्श करा नवाबी कबूल कर ली। इसके साथ ही खालसे को दीपालपुर, कंगणवाल, झबाल परगनों की जागीर दी गई। इसकी एक लाख रुपये वार्षिक आमदन थी। 'श्री गुर पंथ प्रकाश' के अनुसार :

सिंघ कपूर झलै पक्खो थोई।
क्रिपा नज़र पंथ उस वल होई।. . .
पंच भुजंगीअन चरनी छुहाइ।
धरो सीस मोहि पवित्र कराइ ॥४७ ॥

भाई सुबेग सिंघ के यत्नों का सदका कुछ समय के लिए पंजाब के माहौल में शांति आ गई। भाई सुबेग सिंघ को सूबेदार ज़करिया खान

ने लाहौर के कोतवाल के पद पर नियुक्त कर दिया। भाई सुबेग सिंघ ने कोतवाल बनने पर लोगों को यातनाएं देकर मृत्यु के घाट उतारने की सज़ा बंद कर दी। मौत की सज़ा खास हालात में केवल फांसी, कत्ल या तोप के आगे बांधकर उड़ा देने की ही जारी रखी। शहीद सिंघों के सिर, जो किले की दीवारों पर मीनार की तरह चिने हुए थे या कुएं में फेंके हुए थे, सबको निकलवा कर उनका अंतिम संस्कार करवा दिया। शहर में सरेआम गाय काटने पर पाबंदी लगा दी तथा अन्य बहुत-सी कुरीतियां बंद करवा दीं। इन्होंने वर्ष भर अपना काम बहुत मेहनत, ईमानदारी तथा न्यायपूर्ण ढंग से किया। इनके काम करने के ढंग से लाहौर के निवासी बहुत खुश थे। जब लाहौर में सिक्खों को कत्ल कर दिया जाता था तो इनका मन बहुत दुखी होता था। ये लोग सिक्खों की मृतक देहों को इकट्ठा कर उनका अंतिम संस्कार कर देते थे तथा उनकी यादगारों की निशानदेही कर देते थे। भाई सुबेग सिंघ ने लाहौर में ऐसी निशानदेहियों पर सिक्खों की कई यादगारें भी तामीर करवाईं।

१७४५ ई. में ज़करिया खान की मृत्यु के बाद लाहौर का सूबेदार याहिया खान को नियुक्त किया गया। याहिया खान ने भी सिक्खों पर अत्याचार करने शुरू कर दिए। वो शुरू से ही भाई सुबेग सिंघ के साथ नफरत करता था। उसने भाई सुबेग सिंघ के विरुद्ध शिकायतें सुननी शुरू कर दीं।

जिस मसजिद में भाई शाहबाज़ सिंघ विद्या हासिल करने के लिए जाते थे वहां एक दिन बहस के दौरान इन्होंने सिक्ख धर्म के बारे में अपने विचार पेश कर सभी को अपनी योग्यता का लोहा मानने के लिए मजबूर कर दिया। इस ज्ञान-चर्चा में बहुत सारे विद्वानों को मुंह की खानी पड़ी। इसकी ख़बर मौलवी तक भी पहुंची। मौलवी ने इन पर मुसलमान बनने के लिए ज़ोर डाला। कई तरह के लालच दिए गए, परंतु ये टस से मस न हुए। स. रतन सिंघ (भंगू) 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में लिखते हैं :

जैसे तुमै दीन है पयारा।
तैसे ही है धरम हमारा।

मौलवी ने सूबेदार याहिया खान के आगे शिकायत कर दी। याहिया खान ने तफतीश करने के लिए भाई सुबेग सिंघ तथा भाई शाहबाज़ सिंघ को कचहरी में पेश होने का हुक्म किया। सूबेदार ने भी इनको इसलाम धर्म धारण करने के लिए मनाने के बहुत-से प्रयत्न किए, किंतु भाई शाहबाज़ सिंघ न माने। 'श्री गुर पंथ प्रकाश' के अनुसार :

सुबेग सिंघ फड़ जंबरों मंगाया।
तिसका बेटा साथ फड़ाया।

सिक्खों की मदद करने के दोष में भाई सुबेग सिंघ को भी कैद कर लिया गया तथा इसलाम धर्म धारण करने के लिए ज़ोर डाला गया। 'पंथ प्रकाश' के अनुसार :

कहयो न्वाब तुम आवो दीन,

लेवो दाम औ काम औ ज़मीन ॥७॥
नहीं तो मरनों कर मनजूर,
चढ़ो चरख गिर होवो चूर।

अंत में इन दोनों पिता-पुत्र को पकड़ कर जेल में बंद कर दिया गया। इनको इसलाम धर्म कबूल करवाने के लिए हर कोशिश की गई, किंतु ये दोनों योद्धा अपने धर्म पर अडिग रहे और हर तरह के कष्ट झेलने के लिए तैयार हो गए। भाई सुबेग सिंघ तथा भाई शाहबाज़ सिंघ ने हाकिमों से कहा कि "जिस तरह तुम्हें अपना धर्म प्रिय है, उसी तरह हमें भी अपना धर्म प्यारा है। मृत्यु का हमें कोई डर नहीं, मृत्यु ने तो आना ही आना है। यदि धर्म-परिवर्तन करने से भी मृत्यु टल नहीं सकती, तो फिर अपने ज़मीर को मारकर जीना किस काम का?" ज्ञानी गिआन सिंघ 'पंथ प्रकाश' में लिखते हैं :

तुरक भए जे मरैं न कबही तौ हम तुरक बनैहैं।
मौत रहे जे तहि भी सिर पर तो कयों धरम तजैहैं।

'तवारीख गुरू खालसा' के कर्त्ता ज्ञानी गिआन सिंघ लिखते हैं कि भाई सुबेग सिंघ तथा भाई शाहबाज़ सिंघ को चरखड़ियों पर चढ़ाने से पहले घोर यातनाएं दी गईं। उनको नंगा कर उल्टा लटकाया गया, कोड़े मारे गए तथा अन्य कई प्रकार के कष्ट दिये गये।

याहिया खान ने इनको चरखड़ी पर चढ़ाकर शहीद करने का फरमान काज़ी द्वारा जारी करवा दिया। पहले भाई सुबेग सिंघ को चरखड़ी पर चढ़ाया गया। भाई सुबेग सिंघ पर कोई सख्ती चलती न देखकर इनको चरखड़ी से उतार कर इनके नौजवान सुपुत्र भाई शाहबाज़ सिंघ को चरखड़ी पर चढ़ाकर यातनाएं देने का हुक्म दिया। भाई रतन सिंघ (भंगू) के अनुसार :

तब नवाब ऐसे कहयो, या को लेहु उतार।
याके बेटे को टंगयो, याहू को जु दिखार ॥ १६ ॥

जल्लादों ने भाई सुबेग सिंघ की आंखों के सामने भाई शाहबाज़ सिंघ को चरखड़ी पर चढ़ाकर घुमाया। इन दोनों गुरसिक्खों ने अकाल पुरख के हुक्म अंदर सिमरन करते हुए सारी यातनाएं झेली। 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में जिक्र है :

उचे चाढ़ फिर बहुत घुमाया,
वाहिगुरू तिन नांहि भुलाया।
जयों जयों मुख ते गुरू उचारे,
अकाल अकाल कर ऊच पुकारे ॥१४॥

चरखड़ी की दो बार की मार से इनका सारा शरीर जख्मी हो गया। इनका मांस जंबूरों से नोचा गया। ऐसी दर्दनाक यातनाओं को देखकर हर एक ने मुंह में उंगली डाली हुई थी। जल्लाद यातनाएं दे-देकर थक चुके थे। आखिर, उन्होंने भाई शाहबाज़ सिंघ को बंदीखाने में भेज दिया।

एक नई चाल द्वारा दोनों पिता-पुत्र को एक दूसरे से अलग कर यह अफवाह फैला दी कि दोनों ने इसलाम धर्म कबूल कर लिया है। भाई शाहबाज़ सिंघ से कहा गया कि "तू अभी बच्चा है। तेरी उम्र दुनिया देखने की है। तेरे पिता ने तो अपनी उम्र भोग ली है। तू समझदार और फारसी पढ़ा हुआ है, इसलिए तुझे जिद छोड़कर

इसलाम धर्म कबूल कर लेना चाहिए। 'पंथ प्रकाश' में जिक्र किया गया है :

दीन मुहंमदी कर कबूल तूं सरदारी बड पाहैं। तूंतो पढयो फारसी अरबी बुद्धीवान दिसैहैं। अभि नवेस कालेस एहु हठ छोड कयोन सुख लैहैं। खाइ पैन लिय पिदर तुमारे बूढा मरनों चैहैं। खांण पीण दी उमर तुमारी तूं कयों जिंदड़ी दैहैं। मजब धरम पर मूरख मरहैं चत्रन मरते कोहैं।

भाई सुबेग सिंघ पर भी ज़ोर डाला गया कि ये इसलाम कबूल कर दुनिया में अपनी जड़ बनाए रखें। इकलौते पुत्र के शहीद हो जाने के बाद दुनिया में इनका नाम लेने वाला भी नहीं बचेगा। भाई सुबेग सिंघ ने धर्म गंवाकर, मर-मर कर जिंदा रहने की बजाय गर्व से धर्म पर दृढ़ रहते हुए शहीद होने को प्राथमिकता दी।' श्री गुर पंथ प्रकाश' में बताया गया है :

सिक्खन काज सु गुरू हमारे,
सीस दीओ निज सन परवारै ॥२७॥
चारे पुतर जान कुहाए, सो चंडी की भेंट कराए।
हम कारन गुर कुलहि गवाई,
हम कुल राखैं कौण बडाई ॥२८॥

अर्थात् गुरु साहिबान ने हमारे लिए चारों पुत्र कुर्बान कर दिए, सरवंश वार दिया। मैं अपनी कुल रखूं, यह कौन-सी कुल का यश है ?

भाई सुबेग सिंघ का उत्तर सुनकर यातनाओं का दौर फिर शुरू हो गया। बुरी तरह से मार-पीट की गई। पिता-पुत्र दोनों को इकट्ठा बांधकर, चरखड़ी पर चढ़ाकर घुमाया गया। दोनों को आखिरी दम तक चरखड़ी पर घुमाते हुए इसलाम कबूल करने के लिए कहा जाता रहा, परंतु ये दोनों आखिरी दम तक यही बोलते रहे :

सुबेग सिंघ तब कुरनश करी,
धंन चरखड़ी धंन यह घरी ॥८॥
चाढ़ चरखड़ी हमैं गिरावो,
सो अब हम को ढील ना लावो।
हम तो गुर के सिक्ख सदावैं,
गुर के हेत प्राण भल जावैं ॥९॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

यह घटना १७४५ ई. की है जब पिता-पुत्र दोनों को लाहौर में चरखड़ी पर चढ़ाकर शहीद कर दिया गया। भाई शाहबाज़ सिंघ की आयु उस समय मात्र १८ वर्ष थी। स. रतन सिंघ (भंगू) 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में लिखते हैं :

सुबेग सिंघ जंबर सुत नाल।
चढ़दै चरख जिन जपयो अकाल।
धन धन वै जिन सिदक न हारा।
दीआ सीस मुख गुरू उचारा।

स्त्रोत-सूचना :

१. स. रतन सिंघ (जग्गी), *सिक्ख पंथ कोश*
२. भाषा विभाग पंजाब, *पंजाब कोश*
३. ज्ञानी गिआन सिंघ, *तवारीख गुरू खालसा*
४. प्रिं. सतिबीर सिंघ, *अठारहवीं सदी दी बीर परंपरा दा विकास*
५. प्रिं. तेजा सिंघ— डॉ. गंडा सिंघ, *सिक्ख इतिहास*
६. स. रतन सिंघ (भंगू), *श्री गुर पंथ प्रकाश*
७. ज्ञानी गिआन सिंघ, *पंथ प्रकाश*
८. भाई कान्ह सिंघ नाभा, *महान कोश*

दिल्ली के गुरुधामों का कार-सेवक : सरदार बघेल सिंह करोड़सिंघिया

- स. किरपाल सिंघ*

कौमों का इतिहास उसके नायक सृजित करते हैं। वे अपनी कौम और समाज के लिए कुछ करने के लिए नि:स्वार्थ भावना का जज़्बा लेकर चल पड़ते हैं और वक्त आने पर हज़ारों जांबाज योद्धाओं के सरदार बन जाते हैं। फतह उनके पैर चूमती है और उसे भी वे अकाल पुरख को समर्पित कर देते हैं। ऐसे योद्धाओं की दास्तान से सिक्ख इतिहास भरा पड़ा है।

सन् १७१६ ई. में बाबा बंदा सिंह बहादुर की शहादत के बाद तकरीबन बीस से पच्चीस वर्षों के अरसे के दौरान उस वक्त की मुग़लिया हुकूमत द्वारा सिक्खों का खुराखोज मिटाने के लिए उन पर हर तरह की कठोरता और अमानवीय ज़ुल्म किये गए थे। भारत के उत्तरी क्षेत्र और ख़ास कर दरिया यमुना व सिंध के दरमियान स्थित इलाकों पर मुग़लिया हुकूमत की ख़ास चौकसी एवं नज़र रही थी। हुकूमत ने पंजाब के माझा क्षेत्र के हर गाँव की सीमा में सिक्खों को खत्म करने के लिए जाल बिछाया हुआ था। ऐसे हालात के बावजूद भी सिक्खी की लौ नहीं बुझी थी। ख़ालसे का संघर्ष अभी जारी था।

मुग़लिया हुकूमत तो यही समझे बैठी थी कि उसने ख़ालसे का खुराखोज मिटा दिया है। उसकी यह धारणा तब गलत साबित हुई जब खालसा पंथ के जुझारू जांबाज हरियावल दस्तों का उभार शुरू हुआ। यहां एक ऐतिहासिक तथ्य ज़िक्रयोग्य है कि उस समय बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहादत के बाद मुग़ल हुकूमत ने हिंदुओं पर किसी भी तरह के हथियार रखने पर सख़्त पाबंदी लगा दी थी। इसके अलावा उन्हें सिर के केश और दाढ़ी रखने की भी इजाज़त नहीं थी तथा अच्छी नस्ल के घोड़े रखने की भी मनाही थी। यह सब कुछ उनको सिक्खों से अलग-थलग रखने की मंशा के साथ ही किया गया था। उस वक्त गाँव का चौकीदार और नंबरदार सरकार के मुखबिर होते थे। तब यह व्यवस्था अरबी शासकों के समय (लगभग ५०० वर्षों) से चली आ रही थी। इस व्यवस्था से अंग्रेज़ों ने भरपूर फ़ायदा लिया और यह आज भी लागू है। ऐसे हालात में बचे-खुचे सिक्ख परिवार किस तरह गुज़र-बसर करते रहे होंगे, इसका अंदाज़ा लगाना भी असंभव है। (१९८४ ई. के बाद सिक्खों ने 'तत्कालीन ज़ालिम सरकार के विरुद्ध संघर्ष' का जो दौर अपने तन पर झेला है, वह उसी समय की याद कहा जा सकता है।) ख़ालसे के योद्धाओं को तन ढकने के लिए

*पूर्व रीसर्च स्कालर, सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर। फोन : ९८५५०-३५३५५

आवश्यक कपड़ा और खाने के लिए ज़रूरी भोजन भी नसीब नहीं होता था। उस समय खंडे-बाटे का अमृत छकना और ख़ालसे की मर्यादा के धारक बनने की कितनी कीमत चुकानी पड़ती थी, आज हम उसका अंदाज़ा भी नहीं लगा सकते। उस समय खालसा-योद्धाओं के जत्थे कथनी और करनी के पक्के थे। उनके द्वारा किये गए कारनामे ही उनकी शिनाख़्त थी, जिससे हुकूमत भय खाती थी। किसी भी हुकूमत के लिए लोगों का कोई ख़ास पहनावा कभी भी ख़तरनाक नहीं समझा गया, बल्कि इरादे और निशाने ही परखे जाते हैं। यही कारण है कि खालसा जत्थे के केवल दो सिंघों के साथ निपटने के लिए सरकारी फ़ौज की पूरी एक टुकड़ी (कम से कम ३० सिपाही) भेजी जाती थी। सिंघों ने रिवायती हथियारों से लड़ते हुए हुकूमत से एक-एक गाँव आजाद करवाना शुरू कर दिया था। तब खालसा जत्था पाँच जांबाजों से शुरू हुआ, जो बढ़ता हुआ पच्चीस, फिर पच्चीस सौ और पचास हज़ार घुड़सवारों के रूप में सामने आया। यह सिक्ख इतिहास के संघर्षमयी समय के तथ्य हैं, जिनको कभी भी संजीदगी के साथ विचारा नहीं गया। जत्थे का हर सदस्य उसका कमांडर (जत्थेदार) होता था और उसी समय वह झाड़ू-बरदार भी समझा जाता था। ऐसी भावना के मालिक ही ज़ालिम विदेशी लुटेरों और पहाड़ जैसी मज़बूत मुग़लिया हुकूमत के साथ हथियारबंद टक्कर ले सके थे।

अठारहवीं सदी के इस दौर में ख़ालसे ने भारत के उत्तरी इलाके में अपना दबदबा और सरदारी कायम कर ली थी। खालसा अनगिनत छोटी-छोटी सरदारियों और मिसलों के रूप में सरगर्म रहा। भारत या संसार के इतिहास में ऐसी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती। इसी सदी के अन्तिम दशक में मुग़ल हुकूमत दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान के कुछ इलाकों तक सिमट कर रह गई थी। पंजाब में ख़ालसे का बोलबाला दरिया यमुना और सिंध के दरमियान स्थापित हो चुका था। तब ख़ालसे का संघर्ष मुगलों, देसी रियासतों और विदेशी अफगानी लुटेरों के साथ था। यहां यह तथ्य बताने योग्य है कि उस समय पटियाला की फूलकिया रियासत कभी मुग़ल हुकूमत और कभी अफगान लुटेरों के नायब के तौर पर विचरण करती रही।

सन् १७८२ की दीवाली के अवसर पर समूह खालसा दलों ने श्री अमृतसर साहिब में दिल्ली को फतह करने का गुरमता पास किया। इससे पहले भी तकरीबन दो बार खालसा फौज ने दिल्ली फतह करने की कोशिश की थी। पहली बार सरदार बघेल सिंघ करोड़सिंघिया ने जनवरी, १७७४ ई. में दिल्ली पर शाहदरा वाली दिशा से हमला किया था, परन्तु मुग़ल हुकूमत के मुकाबले फ़ौजी तैयारी न होने के कारण दिल्ली के रास्ते में पड़ते देवबंद, सहारनपुर और गौंसगढ़ के नवाबों से मामला उगाह कर वापिस पंजाब लौट आया था। उपरोक्त तथ्य का प्रकटावा सरदार भगत सिंघ अपनी पुस्तक 'दी हिस्ट्री ऑफ सिक्ख मिसल्ज़' में करता है। दिल्ली पर दूसरी बार हमला सरदार

बघेल सिंघ द्वारा ही अप्रैल, १७७५ ई. में किया गया था। तब उसके साथ सरदार तारा सिंघ गैबा, सरदार राय सिंघ भंगी भी शामिल थे। इस बार खालसा फौज ने कुंजपुर वाली दिशा से दरिया यमुना पार किया और दिल्ली पर हमला किया। हमले की ख़बर सुन कर आस-पास के मुस्लिम रुहेला सरदार भाग गए और खालसा फौज ने देवबंद शहर घेर लिया, जिसे ताराबेग नाम के एक मुग़ल सरदार ने स्थानीय लोगों की मदद से खालसा फौज को नकद हर्जाना भर कर बचा लिया।

इस बार देवबंद का हाकिम जाबता ख़ान भी खालसा फौज के साथ शहंशाह शाह आलम के विरुद्ध लड़ने के लिए मिल गया था। अब दोनों फौजों ने कोटला घाट से यमुना दरिया पार किया और पहाड़गंज वाली दिशा से दिल्ली पर हमला कर दिया। तीन महीने के लगभग लड़ाई चलती रही और आखिर खालसा फौज जुलाई, १७७५ ई. में वापिस पंजाब लौट आई। यहां एक बात याद रखने वाली है कि किसी भी साझी मुहिम पर जाने से पहले समूह खालसा दल श्री अमृतसर में दीवाली और वैसाखी के अवसर पर अरदास करके ही चला करते थे। फरवरी, १७८३ ई. में ख़ालसे के बुड्ढा दल की ६०, ००० फौज ने सरदार बघेल सिंघ करोड़सिंघिया तथा सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया के नेतृत्व में पंजाब से कूच किया। अम्बाला से चलते समय इस दल को तीन हिस्सों में बांट दिया गया। इस दल ने तीन दिशाओं से हमला करते हुए रास्ते में पड़ते गाजियाबाद, बुलंद शहर और खुर्जा, जो उस समय गुड़, घी एवं अनाज की बहुत बड़ी मंडी थी, पर कब्ज़ा कर लिया। मार्च के पहले सप्ताह खालसा फौज सरदार बघेल सिंघ के नेतृत्व में यमुना दरिया का बराड़ी घाट पार कर दिल्ली में दाख़िल हो गई। यहां पहुंच कर खालसा दलों को फिर तीन हिस्सों में बांट दिया गया, जिसके अंतर्गत एक हिस्सा कीमती माल-असबाब और नकदी सहित पंजाब की तरफ मोड़ दिया गया और बाकी दो दल सरदार बघेल सिंघ तथा सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया की कमान में दे दिए गए। कुछ दिन की झड़पों के बाद सरदार बघेल सिंघ की फौज तीस हज़ारी वाली दिशा से हमला कर दिल्ली शहर में दाख़िल हो गई और मल्लिकागंज, सब्ज़ी मंडी, मुग़लपुरा आदि इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया। दूसरी तरफ़ सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया अजमेरी दरवाज़े की सुरक्षा को तोड़ कर शहर में दाख़िल हो गया। इस तरह खालसा दलों का दिल्ली पर कब्ज़ा हो गया।

१२ मार्च, १७८३ ई. वाले दिन खालसा फौजें किले के अंदर दाख़िल हो गईं। कुछ इतिहासकारों का विचार है कि बादशाह शाह आलम (दूसरा) और उसका शाही परिवार हमले के समय किसी सुरक्षित जगह पर छिप गया था। विजेता खालसा दलों का जलसा दीवान-ए-आम में किया गया और सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया को तख़्त पर बिठा कर 'बादशाह-ए-सिंघां' की उपाधि से निवाजा

गया। इसी दिन लाल किले की चहारदीवारी से मुगलों का झंडा उतार कर खालसई निशान साहिब झुला दिया गया। इस अवसर पर सरदार जस्सा सिंघ रामगढ़िया भी अपना दल लेकर लाल किले के अंदर पहुंच गया था। इस ऐतिहासिक जीत की ख़ुशी और निशानी के तौर पर सरदार जस्सा सिंघ रामगढ़िया ने मुग़ल दरबार में लगी एक बड़े-आकार (६'x ४' x ०.७५') वाली कीमती पत्थर की सिल श्री अमृतसर भिजवा दी थी, जो कि अब भी रामगढ़िया बुंगे में स्थित है।

इस दौरान शाही मुग़ल परिवार ने सिक्खों के साथ बातचीत चलाने के लिए समरू बेग़म नाम की एक प्रसिद्ध स्त्री का सहारा लिया जो उस वक्त एक अंग्रेज़ ईसाई मिस्टर वाल्टर रिनार्ट्ज़ सोंबर के साथ ब्याही हुई थी और दिल्ली से कुछ दूर सिरधाना नगर में रह रही थी। इसके माध्यम से सरदार बघेल सिंघ और हार चुकी मुग़ल हुकूमत के दरमियान बातचीत के कई दौर तीस हज़ारी में चले। डॉ. हरी राम गुप्ता की पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ दि सिक्खज़' की तीसरी जिल्द के अनुसार सरदार बघेल सिंघ और मुग़ल बादशाह शाह आलम के दरमियान एक लिखित समझौता हुआ, जिसके अंतर्गत नीचे दर्ज आठ मुद्दों पर सहमति बनी। वे मुद्दे इस प्रकार हैं :—

१. खालसा दल तय समय पर दिल्ली खाली कर और इसे मुग़ल हुकूमत को सौंप कर वापिस चला जायेगा।

२. सरदार बघेल सिंघ दिल्ली में अपने साथ चार हज़ार खालसा फौज के साथ एक वर्ष तक रहेंगे।

३. इस समय के दरमियान दिल्ली और आस-पास के क्षेत्र की कानून-व्यवस्था की सारी ज़िम्मेदारी खालसा दलों की होगी।

४. सरदार बघेल सिंघ के खालसा दलों की छावनी सब्ज़ी मंडी में होगी।

५. राजधानी में ठहरते समय खालसा दल अमन-अमान और संहिता में रहेंगे।

६. दिल्ली में कानून-व्यवस्था बरकरार रखने के लिए सरदार बघेल सिंघ को महसूल की आमदन के एक रुपए में से छः आने वसूल करने का हक होगा।

७. सरदार बघेल सिंघ को दिल्ली में स्थित सात ऐतिहासिक सिक्ख स्थानों पर गुरुधाम बनाने का हक होगा।

८. खालसा दलों को गुरुधामों के निर्माण की सेवा एक साल के अंदर-अंदर मुकम्मल करनी होगी।

इकरारनामे के बाद सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया को वापिस पंजाब भेज दिया गया और सरदार बघेल सिंघ ने दिल्ली के सभी महसूल घरों पर खालसई फ़ौज के नाके लगा दिए। चांदनी चौंक में स्थित उस कोतवाली की इमारत पर कब्ज़ा कर लिया, जहां श्री गुरु तेग़ बहादर जी को शहीद किया गया था। तब यह कोतवाली ख़स्ता हालत में थी और उसके एक हिस्से पर मुसलमानों ने मस्जिद बनायी हुई थी। इसके अलावा रकाबगंज साहिब वाली जगह पर भी

मस्जिद थी। ऐसे हालात में सरदार बघेल सिंघ ने बड़ी सूझ-बूझ से इस स्थान से सम्बन्धित मुसलमान कब्ज़ाधारियों से ये स्थान प्राप्त किये और गुरुद्वारा साहिब तामीर करवाए थे। इनके अलावा तेलीवाड़ा (दिल्ली) में माता सुंदरी जी और माता साहिब कौर जी के रिहायशी बंगले वाले स्थानों पर भी गुरुद्वारा साहिब बनवाए। दरिया यमुना के किनारे स्थित उस स्थान पर गुरुद्वारा साहिब बनवाया, जहां श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी, माता सुंदरी जी, माता साहिब कौर जी और पालित पुत्र— बाबा अजीत सिंघ जी का अंतिम संस्कार किया गया था। एक गुरुद्वारा साहिब जय सिंह पुरा में बनाया (गुरुद्वारा बंगला साहिब), जो श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब से सम्बन्धित है। छठा गुरुद्वारा मजनूं का टीला नामक स्थान पर तैयार करवाया, जहां श्री गुरु नानक साहिब उदासियों के समय पधारे थे। सातवां गुरुधाम मोती बाग़ में बनाया, जहां श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी दक्षिण की तरफ जाते समय कुछ देर ठहरे थे। गुरुद्वारा सीसगंज साहिब, चांदनी चौंक के नाम एक जागीर भी लगवाई थी।

खालसा दलों ने उपरोक्त सभी गुरुधामों की सेवा केवल आठ महीनों के अंदर-अंदर ही मुकम्मल कर ली थी। मुग़ल बादशाह शाह आलम ने इन गुरुधामों के नाम दिल्ली की महसूल की आमदन का आठवां हिस्सा सदा के लिए लगवा दिया था। जब अंग्रेज़ों ने सन् १८५७ ई. में दिल्ली की मुग़ल हुकूमत पर कब्ज़ा किया, तब उन्होंने यह व्यवस्था बंद कर दी थी।

खालसा पंथ का विलक्षण कार-सेवक सरदार बघेल सिंघ तकरीबन नौ महीने दिल्ली में रह कर गुरुधामों की कार-सेवा करवा कर दिसंबर, १७८३ ई. में अपने दल समेत वापिस लौट आया। राज-शक्ति और दौलत को ठोकर मार कर खालसा पंथ के लिए संघर्ष करने वाले ऐसे सिक्ख कार-सेवक जरनैल के नाम आज तक दिल्ली में कोई भी ख़ास यादगार स्थापित नहीं है। सरदार बघेल सिंघ श्री अमृतसर के निकट स्थित गांव झबाल के एक ग़रीब परिवार में पैदा हुआ था। उसके पिता जी ने उसे सरदार करोड़ा सिंघ के डेरे पर एक सेवक के तौर पर भेज दिया था। सरदार करोड़ा सिंघ लाहौर के निकट स्थित कसबा बरकी का रहने वाला था, जो सरदार करम सिंघ के अकाल प्रस्थान के बाद एक छोटी-सी मिसल का सरदार बना, जो कि 'करोड़सिंघिया मिसल' नाम से प्रसिद्ध हुई थी। उसके अकाल प्रस्थान के बाद सरदार बघेल सिंघ को मिसल के सरदार की ज़िम्मेदारी सौंपी गई थी। इसने तकरीबन साठ साल इस मिसल की सेवा निभाई थी।

अकाली फूला सिंघ

*– स. गुरदेव सिंघ**

अठारहवीं सदी के पहले छः दशकों में सारा पंजाब आग की लपेट में झुलस रहा था। सिक्खों के लिए तो घर बना कर एक जगह पर अमन-चैन के साथ जीवन गुज़ारना और भी मुश्किल था। पंजाब के लोगों की आम धारणा बन गई थी कि ''खाधा पीता लाहे दा, बाकी अहमद शाहे दा।'' घोड़ों की काठी ही सिक्खों के घर थे। तेग चलाना, बंदूक चलाना, अच्छी घुड़सवारी करना उनकी अपेक्षित शिक्षा थी। ऐसे हालात में अकाली फूला सिंघ का जन्म बांगड़ क्षेत्र के गांव शीहां के निवासी स. ईशर सिंघ तथा माता हर कौर के घर १७६१ ई. में हुआ। इस गाँव का आज का नाम गाँव देहला (शीहां) है, जो कि आजकल थाना मूनक, तहसील मूनक, ज़िला संगरूर में स्थित है। अकाली फूला सिंघ के पूर्वज राजस्थान के रहने वाले थे। वे रोज़ी की तलाश में पंजाब आए। उनमें से कुछ लोग गाँव शीहां में आकर बस गए।

१७०८-१७१६ ई. के दौरान जब बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने पंजाब में प्राप्तियां की तो स. ईशर सिंघ के पिता स. देवा सिंघ खंडे की पाहुल लेकर सिंघ सज गए और बाबा बंदा सिंघ बहादुर की फ़ौज में भर्ती हो गए। उन्होंने साढौरा की विजय के समय बहादुरी दिखाई। २७ अक्तूबर, १७६१ ई. को दीवाली के अवसर पर सरबत्त ख़ालसे का सम्मेलन श्री अकाल तख़्त साहिब पर हुआ। अलग-अलग मिसलों के सिंघ हज़ारों की संख्या में श्री अमृतसर इकठ्ठा हुए। इनमें स. ईशर सिंघ भी थे। तब अकाली फूला सिंघ की आयु केवल ९ महीने थी। ख़ालसे के इस सम्मेलन में फ़ैसला किया गया कि सरकारी मुखबिरों को सुधारा जाये। इन मुखबिरों का अगुआ जंडिआला का आकल दास निरंजनिया था। इसने सरबत्त ख़ालसे द्वारा पास किये प्रस्ताव की ख़बर सुन कर अहमद शाह अब्दाली से अपनी रक्षा के लिए मदद मांगी। अब्दाली इसे सिंघों का खुरा-खोज मिटाने का एक अच्छा अवसर समझ कर दिसंबर, १७६१ ई. में कंधार से चल कर ३ फरवरी, १७६२ ई. को लाहौर पहुंच गया। जब सिंघों को अब्दाली के पहुंचने की ख़बर मिली तो सिंघ उस समय गाँव कुप्प की सीमा में थे। लाहौर पहुंच कर अब्दाली ने सिंघों का पीछा किया। अब्दाली ने कुप्प रुहीड़ा पहुंचते ही सिक्खों का कत्लेआम शुरू कर दिया। स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया, स. चढ़त सिंघ शुकरचक्किया की मिसलों ने तगड़े हाथ दिखाए। स. ईशर सिंघ को

**गांव— देहला (शीहां), तहसील—मूनक, जिला— संगरूर*

गंभीर चोटें आईं। यह घटना ५ फरवरी, १७६२ ई. को घटी। इस लड़ाई में लगभग तीस हजार सिंघ-सिंघणिआं और बच्चे शहीद हुए थे। स. ईशर सिंघ ज़ख्मी हालत में अपने गाँव लौट आए। वैद्य-हकीमों के इलाज करने के बावजूद गाँव शीहां में चढ़ाई कर गए।

इन्हीं दिनों अकाल पुरख ने स. ईशर सिंघ के गृह में एक और बच्चे की कृपा की, जिसका नाम 'संत सिंघ' रखा गया।

पुरानी लिखितों से पता चलता है कि अकाल प्रस्थान करने से पहले स. ईशर सिंघ ने बड़े बच्चे फूला सिंघ का हाथ बाबा नैणा सिंघ के हाथ में दे दिया था, क्योंकि इनके आपसी सम्बन्ध पक्के थे। एक दिन माता हर कौर को सीढ़ी से गिर जाने के कारण गंभीर चोटें लगीं। बाबा नैणा सिंघ को श्री अनंदपुर साहिब से बुला लिया। माता जी को बचाने के लिए कई प्रयास किये गये, परन्तु अंतिम समय आ गया और माता जी चढ़ाई कर गए। छोटे बालक संत सिंघ को रिश्तेदार गांव अजनोहा ले गए।

अकाली फूला सिंघ दो वर्ष के थे, जब बाबा नैणा सिंघ इस होनहार बालक को शिक्षा दिलाने के लिए डेरे श्री अनंदपुर साहिब ले गए। उन्होंने छोटी उम्र में गुरमुखी और नितनेम की बाणियां याद कर लीं। बाबा नैणा सिंघ ने पंजाबी के साथ-साथ फ़ारसी पढ़ाने के लिए भी विशेष प्रबंध किया। अकाली जी ने युद्ध-विद्या और राजनीति की विद्या भी हासिल की।

महाराजा रणजीत सिंघ अकाली जी का सत्कार करते थे। जो अकाली फूला सिंघ कहते, महाराजा रणजीत सिंघ उनकी हर बात पूरी करते थे। फिर भी अकाली जी ने किसी भूल के बदले महाराजा रणजीत सिंघ को तनख़्वाह लगाई, जो उन्होंने सहर्ष प्रवान कर ली। १८१४ ई. के मध्य में अकाली फूला सिंघ महाराजा से मिलने लाहौर गए, परन्तु धिआन सिंघ डोगरा और दरबारियों ने महाराजा से मिलने न दिया। एक दिन अकाली फूला सिंघ दोबारा कुछ सिंघों को साथ लेकर किले में चले गए और महाराजा को जा फतह बुलाई। महाराजा ने कुर्सी छोड़ कर अकाली जी का सत्कार किया और नौकरों को रसद भेंट करने के लिए कहा। अकाली जी ने कहा, आप दिन-ब-दिन डोगरों तथा अन्य मत वालों का प्रभाव लाहौर दरबार में बढ़ा कर पंथ को भारी नुकसान पहुंचा रहे हो। अकाली जी अंग्रेज़ों के लिए महाराजा द्वारा दिये जा रहे कुछ ज्यादा ही आतिथ्य-सम्मान को भी उनके ध्यान में लाये और कहा कि हम आपको आखिरी फतह बुलाने आए हैं। इसके बाद अकाली जी श्री अनंदपुर साहिब चले गए। महाराजा ने अंग्रेज़ों के दबाव में आकर अकाली फूला सिंघ को बाग़ी करार देते हुए फिलौर के किलेदार मोती राम की कमान तले ५०० घुड़सवारों को अकाली जी को गिरफ़्तार करने के लिए श्री अनंदपुर साहिब भेजा। ख़बर मिलने पर अकाली जी ने तैयारी कर ली। लाहौर-दरबार की फौज ने अपने कमांडर दीवान मोती राम को अकाली जी पर हमला करने से मना कर दिया और अपने हथियार फेंक कर अकाली जी से

क्षमा मांगी। इस घटना के बाद अंग्रेज़ों के कान और खड़े हो गए तथा महाराजा रणजीत सिंघ के मन में अकाली जी के प्रति सम्मान पैदा हो गया। वे इन्तज़ार करने लगे कि अकाली जी को दरबार में बुला कर योग्य ढंग से सम्मानित किया जा सके। जब अकाली जी के श्री अमृतसर पहुंचने की ख़बर मिली तो महाराजा दरबारियों को साथ लेकर आये और पिछली बातों की क्षमा मांगी तथा बहुत-से हथियार, पचास घोड़े व दो हाथी, लंगर के लिए बहुत-सा धन एवं रसद भेंट की। अकाली जी की कमान में पैदल और घुड़सवार सैनिकों की संख्या तीन हज़ार से कम नहीं थी। कई ख़तरनाक लड़ाइयां महाराजा ने इन अकालियों की मदद से जीती थीं। अकालियों की बहादुरी के चर्चे काबुल, इंग्लैंड तक होने लगे।

अकाली फूला सिंघ का पक्का नियम था कि चाहे लड़ाई का मैदान हो या अमन के दिन, वे अपना नित्तनेम कभी न रुकने देते। नवंबर, १८२२ ई. की एक रात को अकौड़े के मैदान में महाराजा को ख़बर दी गई कि अज़ीम खान बड़ी संख्या में सेना लेकर लुंडे दरिया के पार पहुंचने वाला है। जंग का बिगुल बजा और सिपाही अपने कमांडरों की कमांड में इकठ्ठा होने लगे। अकाली जी ने अरदास कर मैदान-ए-जंग की तरफ प्रस्थान किया। सारी तैयारी होने के बाद फ़ौज को कूच करने का हुक्म दिया गया तो गुप्तचर ने ख़बर दी कि अजीम ख़ान अपने चुने हुए दस हज़ार अफगान सैनिक तथा चालीस बड़ी तोपें लेकर नौशहरा से चार कोस पश्चिम दिशा में पहुंच गया है। इस समय उसकी ताकत कई गुना ज़्यादा थी। बाद में महाराजा ने एक घुड़सवार के माध्यम से अकाली जी को यह संदेश भेजा कि हमारे से दुश्मन की ताकत बहुत ज़्यादा है। लाहौर से आ रही बाकी फ़ौज और तोपख़ाना पहुंच जाने पर ही हमला बोला जाये। अकाली जी तो पहले ही अरदास कर चुके थे। धैर्यवान सिक्ख होने के नाते आपने रुकना स्वीकार न किया। अजीम खान की फ़ौज लुंडे दरिया से दाहिनी तरफ़ पहुंच चुकी थी। इसे रोकने के लिए कुंवर शेर सिंघ, स. हरी सिंघ नलूआ और स. बुद्ध सिंघ भेजे जा चुके थे। अफगानों की दूसरी फ़ौज, जिसमें खटक यूसफजयी और अन्य कबीले के लोग लुंडे दरिया के इस तरफ टिब्बा टीरी की पहाड़ियों में मोर्चे लगाए बैठे थे, इनके पास तोपें थीं। ख़ालसे का तोपख़ाना अभी पहुंचा नहीं था। गणेश दास ने 'फतिहनामा गुरू खालसा' में अफगानी फ़ौज की संख्या चालीस हज़ार से ऊपर लिखी है।

खालसा फौज के नौशहरे के मैदान में पहुंचने की देर थी कि अफगानों ने ऊपर से तोप के गोले बरसाने शुरू कर दिए। देखते ही देखते लाशों के ढेर लग गए। स्माइल लिखता है कि पहले हमले में इतना नुकसान हुआ कि महसूस होने लगा कि ख़ालसा फौज मैदान छोड़ कर भाग जाएगी। देखा कि अकाली फूला सिंघ के निहंग पहाड़ी चोटियों के पीछे छिपे अफगानों को बाहर निकालने में सफल हो गए। आमने-सामने की लड़ाई शुरू हो गई। अकाली जी ने जोश में आकर जंग की। सैकड़ों अफगानों को दोज़ख़ का रास्ता दिखा दिया।

गणेश दास लिखता है :

तीर तड़ाक पटाक बंदूक सटाक कटारी सदीन चलावै।

बरछी औ सांग सो योध को घोप भली बिध सो अति मचावै।

अफगानों ने स. गरभा सिंघ तथा स. करम सिंघ को गोली का निशाना बनाया और उन्होंने प्राण त्याग दिए। अकाली फूला सिंघ अपने शूरवीरों को गिरते देख कर आगे बढ़े और तुर्कों पर ऐसा ज़ोरदार हमला किया कि वे तौबा-तौबा कर पीछे हटने के लिए मजबूर हो गए। जब अकाली फूला सिंघ खंडा चला रहे थे तो एक गोली उनकी जांघ में आ लगी। कुछ गोलियां घोड़े को भी आ लगीं। घोड़ा ज़ख्मी होकर मैदान में गिर गया। अकाली जी घोड़े से उतर कर झटपट जत्थे का हाथी मंगवा कर उस पर सवार हो गए। टांग में से बहुत सारा ख़ून बह रहा था। अकाली जी ने महावत को हाथी आगे बढ़ाने के लिए कहा तो महावत हिम्मत हार गया और हाथी को आगे बढ़ाने से मना कर दिया। गणेश दास लिखता है कि अकाली जी ने हाथी का अंकुश अपने हाथ में ले लिया और जहां अफगानों की आखिरी टुकड़ी वीरता के साथ मैदान में डटी हुई थी, वहां चले गए। अकाली फूला सिंघ को हाथी पर बैठा देख कर सारे अफगानी उन पर टूट पड़े, परन्तु अकाली जी को आगे बढ़ता देख पठानों के हौसले पस्त होने लगे और उन्होंने भागना शुरू कर दिया। अज़ीम खान भी पठानों की हार की ख़बर सुन कर अपनी फ़ौज लेकर लुंडे दरिया से जलालाबाद की तरफ भाग गया। इतिहासकारों के अन्दाजे के अनुसार शहीद होने वाले सिंघों की संख्या पांच हज़ार के करीब थी और मरने वाले अफगानों की संख्या दस हज़ार से भी ऊपर थी। नौशहरे के निकट मीलों तक बनी अफगानों की कब्रें अभी भी इस बात का सबूत हैं।

अकाली जी की फौज सत श्री अकाल के नारों के साथ डेरे वापस लौट रही थी। रात का हलका अंधेरा था। अचानक उमर गुल नाम का पठान, जो पत्थर के पीछे छिप कर बैठा था, उसने अकाली जी पर गोलियां चला दीं। कर्नल महां सिंघ, जो अकाली जी के हाथी के साथ चल रहा था, ने कृपाण के साथ उस पठान को कुतर दिया और जल्दी से हाथी भगा कर कैंप में ले आया, जिससे डाक्टरी इलाज मिल सके, मगर तब तक अकाली जी परलोक सिधार चुके थे। यह ख़बर सुनते ही महाराजा रणजीत सिंघ की आंखों में आँसू भर आए। महाराजा रणजीत सिंघ अकाली फूला सिंघ के हाथी की तरफ गए, जिस पर लहू-लुहान हुआ अकाली जी का पांच-भूतक शरीर पड़ा था। शरीर पर गोलियों के निशान थे और हाथी भी बुरी तरह से ज़ख्मी था। अकाली जी के शरीर को हौदे में से बाहर निकलवाया। जंग के मैदान में ही कीमती शाल बिछा कर उस पर अकाली जी की मृतक देह को रख दिया। अगले दिन अकाली फूला सिंघ के मृतक शरीर का दरिया लुंडे के किनारे धार्मिक और फ़ौजी सम्मान सहित दाह-संस्कार

कृतघ्न

-सतविंदर सिंघ फूलपुर*

'कृतघ्न' शब्द का प्रयोग उस व्यक्ति के लिए किया जाता है जो किसी द्वारा किये उपकार को भुला दे। कोशों में इसके समानार्थक शब्द करीखो, एहसान-फ़रामोश, नमक-हरामी और पामर१ आदि भी मिलते हैं।२

श्री गुरु नानक देव जी ने किसी का उपकार न जानने वाले कृतघ्न के लिए हरामखोर शब्द का प्रयोग किया— "मै कीता न जाता हरामखोरु॥" श्री गुरु अरजन देव जी ने ऐसे व्यक्ति के लिए नमक-हरामी, गुनहगार, बेगाना, अल्प मति आदि शब्द प्रयोग किये हैं।

भाई गुरदास जी ने कृतघ्न को नमक-हराम, गुनहगार, बेईमान, अज्ञानी, मंदी हूं मंदे कहा है।

गुरबाणी में कृतघ्न शब्द (असली पंजाबी शब्द 'अकिरतघण') अलग-अलग सात रूपों में आया है :

अकिरतघण (कृतघ्न)

कीआ न जाणै अकिरतघण विचि जोनी फिरते॥

(पन्ना ३१७)

अकिरतघणा

अकिरतघणा नो पालदा प्रभ नानक सद बखसिंदु॥

(पन्ना ४७)

अकिरतघणै

अकिरतघणै कउ रखै न कोई नरक घोर महि पावणा॥ (पन्ना १०८६)

अकिरतघना

पालहि अकिरतघना पूरन द्रिसटि तेरी राम॥

(पन्ना ५४७)

अकिरतघनारे

तुम्ह देवहु सभु किछु दइआ धारि हम अकिरतघनारे॥

(पन्ना ८०९)

अक्रितघणु

बीचु न कोइ करे अक्रितघणु विछुड़ि पइआ॥

(पन्ना ५४६)

अक्रितघन

कोटि पराध महा अक्रितघन बहुरि बहुरि प्रभ सहीऐ॥३ (पन्ना ५३१)

'कृतघ्न' ऐसा शब्द है जो सिर्फ़ मनुष्य के हिस्से आया है। आम तौर पर हम 'कृतघ्न' शब्द को दुनियावी एहसान-फ़रामोश व्यक्ति के लिए प्रयोग करते हैं, परन्तु गुरबाणी में यह शब्द जीव की परमात्मा के प्रति कृतघ्नता के संदर्भ में प्रयोग किया गया है। कृतघ्न व्यक्ति किस हद तक गिर सकता है, वह परमात्मा, गुरु और माता-पिता के प्रति कैसे कृतघ्नता करता है, उसका हश्र कैसा होता है आदि के बारे में विचार करना हमारा उद्देश्य होगा।

परमात्मा के प्रति कृतघ्नता : जहां कहीं भी कृतघ्न व्यक्ति की बात आयेगी वहां स्पष्ट रूप से दूसरे पक्ष द्वारा किया गया उपकार भी होगा। मानव

*संपादक। फोन : ९९१४४-१९४८४

की परमात्मा के प्रति कृतघ्नता के बारे में बात करने से पहले वाहिगुरु के उपकारों के बारे में जानना ज़रूरी है। पंचम पातशाह सुखमनी साहिब की चौथी असटपदी में बहुत ख़ूबसूरत ढंग से इन उपकारों का वर्णन करते हुए फरमान करते हैं कि माता के रक्त और पिता के बिंद (वीर्य) के सुमेल से परमात्मा ने कितने सुंदर अंग और नैन-नक्श बना कर जीव की सृजना की। माता के गर्भ में भी भोजन की व्यवस्था कर इसका प्रतिपालन किया। फिर जब यह जीव जन्म लेकर धरती पर आया तो अकाल पुरख ने इसके पीने के लिए माता के सीने में सीर पैदा कर दिया। भरी जवानी में भोजन और सुखों की समझ प्रदान की। जब वृद्ध अवस्था में हाथ-पैरों ने काम करना बंद कर दिया तो सेवा करने के लिए सगे-सम्बंधी लगा दिए, जो बैठे हुए के मुंह में ही भोजन डालते रहे। इस पूरी असटपदी में और समूची गुरबाणी में परमात्मा द्वारा जीव पर किये गए उपकारों और बख्शिश का बड़े विस्तृत रूप में वर्णन मिलता है। कादर ने कुदरत में अनगिनत नियामतें देकर जीव को नवाजा है। जो गुणों को न जानने वाला निर्गुण मानव गुरबाणी के कथन— *''दाति पिआरी विसरिआ दातारा॥''* के अनुसार सृजनहार अकाल पुरख की रहमतों से ही प्यार बना कर बैठ जाये और दाता को मन से भुला दे, वही मनमुख है, कृतघ्न है — *''देंदे थावहु दिता चंगा मनमुखि ऐसा जाणीऐ॥''* भाई गुरदास जी ने ऐसे मनमुख को बड़ा कृतघ्न कहा है :

मनमुख वडा अक्रितघणु दूजै भाइ सुआइ लुभाई।
सिरजनहार न चिति वसाई॥२३॥ (वार ३७:२३)

कृतघ्न व्यक्ति के लक्षण और उसका हश्र बताते हुए श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं :

खादा पैनदा मूकरि पाइ॥
तिस नो जोहहि दूत धरमराइ॥१॥
तिसु सिउ बेमुखु जिनि जीउ पिंडु दीना॥
कोटि जनम भरमहि बहु जूना॥१॥ रहाउ॥
साकत की ऐसी है रीति॥
जो किछु करै सगल बिपरीति॥२॥
जीउ प्राण जिनि मनु तनु धारिआ॥
सोई ठाकुरु मनहु बिसारिआ॥३॥ (पन्ना १९५)

कृतघ्न मनुष्य को पंचम पातशाह ने नमक-हरामी, गुनहगार, बेगाना (परमात्मा से अपरिचित), अल्प मति (कम बुद्धि वाला) कहा है। प्रभु ने उसे जीवन, शरीर और सुख दिया है। इस असली तत्व की वह पहचान ही नहीं करता। माया के मोह में फंसा भटकना में ही सारी आयु बिता देता है। जो प्रभु-दाता सब रहमतें देने वाला है उसे थोड़ा भी अपने मन में नहीं बसाता :

लूण हरामी गुनहगार बेगाना अलप मति॥
जीउ पिंडु जिनि सुख दीए ताहि न जानत तत॥
लाहा माइआ कारने दह दिसि ढूढन जाइ॥
देवनहार दातार प्रभ निमख न मनहि बसाइ॥
(पन्ना २६१)

जिस मनुष्य को सर्वव्यापक, सृजनहार परमात्मा भूल जाये, वह सदा विकारों की आग में जलता रहता है। परमात्मा द्वारा किये उपकारों को भूलने वाले कृतघ्न मनुष्य को कोई बचा नहीं सकता। वह मनुष्य सदा भयानक नरक में पड़ा रहता है। जिस मनुष्य को परमात्मा ने जीवन दिया, प्राण दिए, शरीर बनाया, धन दिया, मां के गर्भ में रक्षा कर बहुत दया की, वही कृतघ्न मनुष्य परमात्मा के सभी उपकारों को भूल कर, उसकी प्रीति त्याग कर अन्य पदार्थों के मोह में मस्त रहता

है। वह मनुष्य किसी तरह सफल नहीं होता है :

जिस नो बिसरै पुरखु बिधाता ॥
जलता फिरै रहै नित ताता ॥
अकिरतघणै कउ रखै न कोई नरक घोर महि पावणा ॥७॥
जीउ प्राण तनु धनु जिनि साजिआ ॥
मात गरभ महि राखि निवाजिआ ॥
तिस सिउ प्रीति छाडि अन राता काहू सिरै न लावणा ॥८॥ (पन्ना १०८६)

गुरु के प्रति कृतघ्नता : श्री गुरु नानक पातशाह से लेकर श्री गुरु तेग बहादर साहिब तक नौ पातशाहियों द्वारा हम पर किये गए उपकारों का लासानी गुरु-इतिहास हमारे सामने है। दशम पातशाह के समय तो इन उपकारों में अत्यंत विस्तार हुआ। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने हमारी ख़ातिर अपना पूरा परिवार कुर्बान कर दिया। चारों साहिबज़ादे कुर्बान करवाने के पश्चात ख़ालसे की तरफ इशारा कर कहा— *''इन पुतरन के सीस पहि वार दीए सुत चार। चार मुए तो किआ हूआ जीवत कई हज़ार।''*

आप जी ने खालसा पंथ की साजना कर ख़ालसे को अपना खास रूप कहा। अमृत-पान कर पांच ककारी रहित के धारक बनने की ताकीद की। आज गुरु जी द्वारा किए उपकारों को भूल कर सिक्ख परिवारों में फैली नशाखोरी और पतितपन की हवा गुरु के प्रति घोर कृतघ्नता की शिखर है। जिन्हें *''अंम्रितु कउरा बिखिआ मीठी ॥''*लगती है, ऐसे व्यक्ति भी महा कृतघ्न हैं। दसम पातशाह की नज़रों में वह माँ भी कृतघ्न है जो अपने पुत्र से कहती है, ''पुत्र! मुझसे तुम्हारे केशों की संभाल नहीं की जाती। आ, नाई की दुकान पर चलें, मैं तुम्हारे केश कटवा दूं।'' वास्तव में वह माँ अपने पुत्र के केवल केश ही कत्ल नहीं कटवा रही होती बल्कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और माता गुजरी जी द्वारा किए उपकारों एवं उनकी भावनाओं का भी कत्ल करवा रही होती है। आज केशों पर कैंची चलवाने वाले अपने उन बुज़ुर्गों के प्रति भी कृतघ्न हैं, जिन्होंने कभी खुर्पी से खोपड़ी उतरवा कर सिक्खी को केशों-श्वासों संग निभाया था।

विप्रों की कृतघ्नता : जहां व्यक्तिगत कृतघ्नता की बात आम देखने को मिलती है वहीं कई बार कुछ कौमें भी दूसरी कौम के एहसान को भुला कर कृतघ्नता का ऐसा घटनाक्रम चलाती हैं, जिसको सदियों तक भुलाना कठिन हो जाता है। विप्रों की उदहारण इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। दुनिया के इतिहास में मानवता को शर्मसार कर देने वाला कृतघ्नता का नंगा नाच तब प्रत्यक्ष रूप में सामने आया जब (गंगू की औलाद) विप्रों ने अपने धर्म-रक्षक श्री गुरु तेग बहादर साहिब के उपकारों को भुला कर श्री अकाल तख़्त साहिब और सर्वसांझीवालता के प्रतीक श्री हरिमंदर साहिब पर तोपों, टैंकों से हमला कर सैकड़ों निर्दोष श्रद्धालुओं को शहीद कर दिया। इसके बाद विप्रों ने कृतघ्नता का दूसरा तांडव दिल्ली की सड़कों पर बेख़ौफ़ होकर किया। इस तांडव में उन निर्दोष बच्चों, बुज़ुर्गों और नौजवान सिक्खों को गले में टायर डाल कर जिंदा जलाया गया, जिन्होंने हिंदोस्तान में केवल दो प्रतिशत संख्या में होने के बावजूद अनगिनत कुर्बानियां देकर देश को आज़ाद करवाया था। ऐसी कृतघ्नता की मिसाल दुनिया के इतिहास में अन्यत्र और कहीं मिलना मुश्किल है।

माता-पिता के प्रति कृतघ्नता : माता अनेक कष्ट

सहन कर बच्चे को जन्म देती है। खुद गीली जगह पर बैठ कर उसे सूखी जगह पर लिटाती है। यदि बच्चे को थोड़ी-सी भी तकलीफ़ हो तो सारी-सारी रात उसके सिरहाने बैठी जगती रहती है। पिता अपना ख़ून-पसीना एक कर कमाई करता है। अपने बच्चों को पढ़ा-लिखा कर नौकरियों पर लगवाता है, घर बना कर देता है। माता-पिता अपने बच्चों की ख़ातिर हर कुर्बानी देने के लिए तैयार रहते हैं, बच्चों का विवाह कर ख़ुशी महसूस करते हैं। बुढ़ापे में इन बच्चों ने बुजुर्ग माता-पिता की लाठी (सहारा) बनना होता है, मगर ज्यादातर बच्चे माता-पिता के उपकारों को भुला कर कृतघ्न हो जाते हैं। वे उनको बोझ समझने लगते हैं। अपने हाथों से बनाए घर में ही उनके लिए कोई जगह नहीं रहती। जिस घर में उन्होंने अपने बच्चों को उंगली पकड़ कर चलना सिखाया था, लोरियां देकर सुलाया था, उस घर के दरवाज़े उनके लिए बंद हो जाते हैं। कई बार माता-पिता को वृद्धाश्रमों में जाकर शरण लेनी पड़ती है। उस समय उनके दिल पर क्या बीतती होगी, इस बात का अनुमान हम सब लगा सकते हैं। औलाद की इस कृतघ्नता के आगे बाकी सभी प्रकार की कृतघ्नता छोटी पड़ जाती है। आज वृद्धाश्रमों में कुछ अन्य मजबूरी वाले लोगों को छोड़ कर शेष सभी कृतघ्न बच्चों के माता-पिता ही जीवन बसर कर रहे हैं। यह समाज के माथे पर बहुत बड़ा कलंक है। भाई गुरदास जी इस संबंधी लिखते हैं :

माता पिता अनंद विचि पुतै दी कुड़माई होई।
रहसी अंग न मावई गावै सोहिलड़े सुख सोई।
विगसी पुत विआहिऐ घोड़ी लावां गाव भलोई।
सुखां सुखै मावड़ी पुतु नूंह दा मेल अलोई।
नुहु नित कंत कुमंतु देइ विहरे होवह ससु विगोई।
लख उपकारु विसारि कै पुत कुपुति चकी उठि झोई।
होवै सरवण विरला कोई ॥११॥ (वार ३७:११)

इस वार की तेरहवीं पउड़ी में भाई साहिब लिखते हैं कि ऐसे बेईमान कृतघ्न पुत्र, जो परोपकारी माता-पिता के उपकार-प्यार को भुला देते हैं, उनका किया जप-तप, पूजा-पाठ, दान-व्रत, तीर्थ-स्नान सब व्यर्थ है। जो बच्चे माता-पिता को प्रसन्न नहीं रख सकते वे धार्मिक कर्मकांड से गुरु-परमेश्वर को भी प्रसन्न नहीं कर सकते :

मां पिउ परहरि सुणै वेदु भेदु न जाणै कथा कहाणी।
मां पिउ परहरि करै तपु वणखंडि भुला फिरै बिबाणी।
मां पिउ परहरि करै पूजु देवी देव न सेव कमाणी।
मां पिउ परहरि न्हावणा अठसठि तीरथ घुंमणवाणी।
मां पिउ परहरि करै दान बेईमान अगिआन पराणी।
मां पिउ परहरि वरत करि मरि मरि जंमै भरमि भुलाणी।
गुरु परमेसरु सारु न जाणी ॥१३॥ (वार ३७:१३)

उपरोक्त विचारों के बाद यह देखना बनता है कि क्या संसार में कोई इतनी घटिया चीज़ है जिसके साथ कृतघ्न व्यक्ति की तुलना की जा सके। इस संबंधी भाई गुरदास जी ने कमाल का दृष्टांत पेश किया है। एक स्त्री ने कुत्ते के मांस को शराब में डाल कर पकाया। फिर उसे मरे हुए मनुष्य की बदबूदार खोपड़ी में डाल कर ऊपर से लहू भरे कपड़े से ढक कर चल पड़ी। रास्ते में जाते हुए किसी ने पूछा कि इतनी पलीत चीज़ को ढक कर क्यों ले जा रही हो ? उसके संदेह को दूर करने के

लिए वह कहने लगी, ''ढक कर इसलिए ले जा रही हूं कि इस पर किसी कृतघ्न व्यक्ति की बुरी नज़र न पड़ जाये। यदि पवित्र चीजों को भी अपवित्र कर देने वाली कृतघ्न व्यक्ति की नज़र इस पर पड़ गई तो यह भ्रष्ट हो जायेगा।''

मद विचि रिधा पाइ कै कुते दा मासु।
धरिआ माणस खोपरी तिसु मंदी वासु।
रतू भरिआ कपड़ा करि कजणु तासु।
ढकि लै चली चूहड़ी करि भोग बिलासु।
आखि सुणाए पुछिआ लाहे विसवासु।
नदरी पवै अकिरतघणु मतु होइ विणासु ॥९॥

(वार ३५ : ९)

इतना बुरा है कृतघ्न व्यक्ति और उसकी नज़र। कृतघ्न व्यक्ति धरती पर बोझ हैं। धरती भी इनका भार उठाने में असमर्थ है। किसी ने धरती से पूछा कि तुम्हारे से किस चीज़ का भार सहा नहीं जाता, तो धरती कहने लगी कि मुझे गगनचुंबी पहाड़ों का कोई भार नहीं। न ही किलों, घरों, समुद्रों, नदियों, फ़लों से लदे वृक्षों का भार है। धरती पर विचरण कर रहे अनगिनत जीव-जंतुओं का भी कोई भार नहीं लगता। फिर वह कौन-सी चीज़ है जिसका भार उससे सहा नहीं जाता? भाई गुरदास जी के अनुसार धरती ने कहा :

भारे भुईं अकिरतघण मंदी हू मंदे ॥

(वार ३५ : ८)

भाई संतोख सिंघ लिखते हैं कि जिस प्रकार परोपकार को पुण्य, दान, तप, यज्ञ आदि सभी शुभ कर्मों से ऊपर माना जाता है, उसी तरह कृतघ्न अनेक प्रकार के सभी पापों से बुरा है :

पुंन, दान तप मख को करिबो,
होति न परउपकार समान।
कलमल करनि अनेकनि रीती,
क्रितघण के सम कोइ न जानि।

(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, रासि ३, अंशू ४५)

उपरोक्त विचार से सिद्ध हो जाता है कि इस दुनिया में यदि सबसे घटिया कोई व्यक्ति है तो वो है— कृतघ्न। फिर विचार करनी बनती है कि कृतघ्न व्यक्ति की इस संसार में और परमात्मा के दर पर क्या दशा होती होगी? गुरबाणी में जहां कहीं भी कृतघ्न व्यक्ति की बुरी दशा और उसकी सज़ा का ज़िक्र आया है, वहां उसकी इस दशा का कारण परमात्मा के प्रति बेमुखतायी (विरक्तता) बताया है। सांसारिक स्तर पर समाज में भी किसी के साथ कृतघ्नता वही करेगा जो परमात्मा से विमुख है, जिसके हृदय में परमात्मा का भय नहीं। गुरबाणी में कृतघ्नता की बात परमात्मा के संदर्भ में ही आयेगी।

श्री गुरु अरजन देव जी कथन करते हैं कि परमात्मा द्वारा किये उपकारों को न जानने वाला कृतघ्न मनुष्य परमात्मा के चरणों से बिछड़ा रहता है। प्रभु के साथ फिर से मिलाने के लिए कोई उसका मध्यस्थ नहीं बनता। आखिर बहुत निर्दयी यमदूत रूपी मौत उसे आ घेरती है। सारी उम्र प्रभु से विमुख, माया के मोह में गलतान रहने के कारण आखिर वह अपने किये का फल पाता है। गुरु की शरण में आकर वह परमात्मा के गुण कभी याद नहीं करता। उसकी सारी उम्र विकारों की तपिश में यूं बीतती है, जैसे आग की तपिश से गर्म स्तम्भ को गले से लगाया हो। काम, क्रोध, अहंकार आदि में फंस कर वह अपना आत्मिक जीवन लुटा बैठता है। कृतघ्न मनुष्य आत्मिक जीवन की समझ गंवा कर आखिर पछताता हुआ इस दुनिया से चला जाता है :

बीचु न कोइ करे अक्रितघणु विछुड़ि पइआ ॥

आए खरे कठिन जमकंकरि पकड़ि लइआ ॥
पकड़े चलाइआ अपणा कमाइआ महा मोहनी रातिआ ॥
गुन गोविंद गुरमुखि न जपिआ तपत थंम्ह गलि लातिआ ॥
काम क्रोधि अहंकारि मूठा खोइ गिआनु पछुतापिआ ॥

(पन्ना ५४६)

कृतघ्न लोग प्रभु की मार के मारे हुए होते हैं। वे परमात्मा के किये उपकारों को भुला कर जन्म-मरण के चक्कर में भटकते हैं :

— नरक घोर बहु दुख घणे अकिरतघणा का थानु ॥
तिनि प्रभि मारे नानका होइ होइ मुए हरामु ॥१ ॥

(पन्ना ३१५)

— अकिरतघणा हरि विसरिआ जोनी भरमेतु ॥

(पन्ना ७०६)

भाई गुरदास जी इस संबंधी लिखते हैं कि नमक-हरामी (कृतघ्न) गुनहगार होता है। ईश्वर की दरगाह में वह धड़-धड़ कर ढोल की तरह पीटा जाता है अर्थात् उसके शरीर पर कोड़े पड़ते हैं। कृतघ्न मनुष्य जन्म-मरण में फंस कर अपमानित होता है :

— लूण हरामी गुनहगारु धड़ु धंमड़ धड़िआ ॥

(वार ३५:१०)

— लूणहरामी गुनहगार मरि जनमु विगोवै ॥

(वार ३५:११)

भाई कान्ह सिंघ नाभा ने 'गुरमति मारतंड' में 'गुरबिलास' की पंक्तियों के अनुसार लिखा है कि जो अपने स्वामी को रण में पीठ दिखा कर भाग जाये उस कृतघ्न की इस जहान में निंदा होती है और दूसरे जहान में भी स्थायी निवास नहीं मिलता। ऐसा व्यक्ति इतना अपवित्र होता है कि गिद्धें भी उस मरे हुए का मांस नहीं खातीं, नमक-हरामी समझ कर छोड़ जाती हैं। परमात्मा के दर पर भी उसे कोई सुख नहीं मिलता। इस जहान में भी वह अपना यश गंवा कर लज्जित होता है। अपने स्वामी के साथ कृतघ्नता करने के कारण अपने सिर में सात मुट्ठियां राख डलवा लेता है अर्थात् घोर बदनामी कमाता है :

स्वामी कह जो रन मय त्यागै।
इहां निंद नरक तिह आगै।
तां को मास गीध नहीं लैही।
निमक हराम जान तज देही।
आगे सुरगु न इहां जजु।
सात मुठी तां के सिर भस्स।

कृतघ्न की ऐसी दशा के बारे में पढ़ कर मन में भय उत्पन्न होता है कि इस जीवन-पथ पर चलते हुए कहीं कोई ऐसी गलती न हो जाये कि हमारे माथे पर भी कृतघ्नता का दाग़ लग जाये।

हवाले और टिप्पणियां :

१. 'पामर' शब्द के अर्थ भाई कान्ह सिंघ ने किये हैं— पा-मर; रक्षा करने वाले को जो मार दे, कमीना, पाज़ी, दुष्ट, धर्म का शत्रु आदि। महान कोश, पृष्ठ ७६४.

२. भाई कान्ह सिंघ नाभा, महान कोश, नेशनल बुक शॉप, १९९८, पृष्ठ ३६, गुरमति मारतंड, भाग प्रथम, पृष्ठ ३१४.

भुखिआ भुख न उतरी

*-डॉ. परमजीत कौर**

भूख का सम्बन्ध जितना शरीर के साथ है, उतना ही मन के साथ भी है। भोजन की भूख शरीर सम्बन्धी भूख है, पर यह भूख तब तक नहीं मिटती जब तक मन भूखा रहता है।

जपु जी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी समझा रहे हैं कि मन के भूखे अर्थात् तृष्णा के अधीन रहने से भूख नहीं मिटती, चाहें तीनों लोकों के पदार्थ एकत्र कर लिए जाएं— *''भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार॥''* स्वादिष्ट पदार्थ दिन-रात खाने से भी मन की भूख नहीं मिटती, जिनके लिए मनुष्य दिन-रात भागदौड़ करता रहता है :

दिनु दिनु करत भोजन बहु बिंजन ता की मिटै न भूखा॥
उदमु करै सुआन की निआई चारे कुंटा घोखा॥

(पन्ना ६७२)

इन्द्रियों का स्वभाव है कि वे अपने-अपने विषयों की तरफ आकर्षित होती रहती हैं। जब तक आँख, नाक, कान, जिह्वा आदि इन्द्रियां अपने-अपने रसों के अधीन रहती हैं। उनकी भूख समाप्त नहीं होती। समझाने से भी समझ नहीं आती। गुरु साहिब समझा रहे हैं कि मुख बोल कर तृप्त नहीं होता, कान बातों को सुनने से तथा नेत्र सुंदर रूप-रंग देखते रहने से तृप्त नहीं होते। विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट पदार्थों को खाने पर भी जीभ का चस्का समाप्त नहीं होता। अधिकाधिक प्राप्ति के लिए यत्न किया जाता है। तृष्णा के ताप से सन्तप्त मनुष्य तभी संतुष्ट होता है, जब वह गुणों का बखान करता हुआ परमात्मा में लीन हो जाता है :

आखणु आखि न रजिआ सुनणि न रजे कंन॥
अखी देखि न रजीआ गुण गाहक इक वंन॥
भुखिआ भुख न उतरै गली भुख न जाइ॥
नानक भुखा ता रजै जा गुण कहि गुणी समाइ॥

(पन्ना १४७)

अधिक धन की भूख, शारीरिक सुख के साधनों की कामना, मान-प्रसिद्धि की भूख आदि समस्त कामनाओं का सीधा सम्बंध मन के साथ है। मनुष्य चाहे जितना भी धन एकत्र कर ले प्रसिद्धि, सम्मान, प्रतिष्ठा प्राप्त कर ले, मगर उसका मन इससे भी सन्तुष्ट नहीं होता। उसके अंदर की भूख बनी रहती है :

अंदरि तिसना अगि है मनमुख भुख न जाइ॥

(पन्ना १४२४)

यह भूख चाहे सांसारिक पदार्थों की हो, चाहे मान-प्रतिष्ठा की हो, मनुष्य के मन को भटकाती रहती है, अशांत रखती है। तृष्णा की कोई सीमा नहीं होती। जैसे आग में घी डालने से आग बढ़ती जाती है, वैसे ही कामनाओं की पूर्ति से तृष्णा और भी बढ़ती जाती है :

— बिखिआ महि किन ही त्रिपति न पाई॥
जिउ पावकु ईधनि नही ध्रापै बिनु हरि कहा अघाई॥

(पन्ना ६७२)

— सो संचिओ जितु भूख तिसाइओ॥
अंम्रित नामु तोसा नही पाइओ॥ *(पन्ना ७१५)*

**६२०, गली नं. १, छोटी लाईन, संतपुरा, यमुनानगर (हरियाणा)— १३५००१, फोन : ९८१२३-५८१८६*

— मनु दह दिसि चलि चलि भरमिआ
मनमुखु भरमि भुलाइआ ॥
नित आसा मनि चितवै मन त्रिसना भुख लगाइआ ॥
अनता धनु धरि दबिआ फिरि बिखु भालण गइआ ॥
जन नानक नामु सलाहि तू बिनु नावै पचि पचि मुइआ ॥

(पन्ना ७७६)

यह अंदर की सदा रहने वाली भूख ही है जो माँ-बाप को बच्चों से दूर करती जा रही है, जिंदगी जीने के लिए मजबूर कर रही है। आज इस विकराल भूख के कारण ही पारिवारिक सम्बन्धों का रूप बदल गया है, जीवन के मूल्य बदल गये हैं।

संतोष, दया, क्षमा, सहनशीलता, सदाचार के स्थान पर अतृप्त मानसिकता, कठोरता, क्रोध, बदले की भावना तथा दुराचार की प्रधानता है। नशों के सेवन ने बीमार मानसिकता को जन्म दिया है। यह निरन्तर बढ़ती हुई भूख ही दुखों का कारण है। गुरु साहिब भटकते हुए मन को समझा रहे हैं— हे मन! हर समय तृष्णा के अधीन होकर गिले-शिकवे न करता रह। जिस परमात्मा ने लाखों जीव पैदा किये हैं, प्रत्येक जीव की संभाल भी वो स्वयं ही करता है :

मन भुखा भुखा मत करहि मत तू करहि पूकार ॥
लख चउरासीह जिनि सिरी सभसै देइ अधारु ॥

(पन्ना २७)

मोह, लोभ, अहंकार, ईर्ष्या तथा निन्दा की आदत मन की भूख के शांत न होने के कारण है। गुरु-वचन है :

— अहंकारीआ नो दुख भुख है
हथु तडहि घरि घरि मंगाइ ॥ *(पन्ना ३०३)*

— जिन गुरु गोपिआ आपणा से लैदे ढहा फिराही ॥
तिन की भुख कदे न उतरै नित भुखा भुख कूकाही ॥

(पन्ना ३०८)

जिसके अंदर की भूख की कोई सीमा नहीं, निश्चय ही परमात्मा के साथ उसका सम्बन्ध नहीं है। उसके मन तथा प्रभु के मध्य लाख कोस का अंतर बना रहता है :

साकत नर प्रानी सद भूखे नित भूखन भूख करीजै ॥
धावतु धाइ धावहि प्रीति माइआ लख कोसन कउ बिथि दीजै ॥

(पन्ना १३२३)

यदि ऐसा मनुष्य परमात्मा से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है तो वह केवल दिखावा है, लोकाचार है, क्योंकि जो परमात्मा के साथ जुड़ा हुआ होता है उसकी भूख इतनी विकराल हो ही नहीं सकती कि वह आचरण से पतित हो जाए, दूसरों का हक मारता फिरे तथा स्वार्थ के लिए दूसरों को कष्ट देने में संकोच न करे। परमात्मा के रंग में रंगा हुआ, यहां तक कि इस रास्ते पर कदम रखने वाला भी संतुष्टि के मार्ग पर चल पड़ता है तथा धीरे-धीरे तृप्त हो जाता है :

— दुख भुख नह विआपई जे सुखदाता मनि होइ ॥

(पन्ना ४३)

— तिस की त्रिसना भुख सभ उतरै जो हरि नामु धिआवै ॥

(पन्ना ४५१)

तृष्णा की आग मनुष्य को अन्दर तक जला देती है। यह आग छिपी हुई होती है जो ऊपर से दिखाई नहीं देती। जिसके अन्दर यह आग भड़कती है वह ऊपर से तो बहुत सुखी प्रतीत होता है, मगर उसका मन कभी सुखी तथा शांत नहीं होता :

अंतरि चिंता नैणी सुखी मूलि न उतरै भुख ॥
नानक सचे नाम बिनु किसै न लथो दुखु ॥

(पन्ना ३१९)

उसके अन्दर ईर्ष्या की आग जलती रहती है। वह

दूसरों को सुखी देखकर दुखी होता है। इस जलन के कारण जगह-जगह भटकता फिरता है। उसके मन की दशा कुत्ते जैसी हो जाती है, जो योग्य-अयोग्य, खाने योग्य, न खाने योग्य सब जगह मुंह मार लेता है। प्राप्ति की अंधी दौड़ उसको कुछ सोचने ही नहीं देती। प्राप्ति का नशा विवेक-शक्ति पर हावी हो जाता है। मन स्थिर नहीं रहता। ऐसा मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए किसी का भी बुरा सोच सकता है, किसी को भी दुख पहुंचा सकता है। सदाचारी मनुष्य के अंदर भी यदि यह भूख पैदा हो जाए तो वह भी दुराचारी हो जाता है:

— *जिउ कूकरु हरकाइआ धावै दह दिस जाइ ॥*
लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ ॥
काम क्रोध मदि बिआपिआ फिरि फिरि जोनी पाइ ॥
(पन्ना ५०)

— *त्रिसना त्रिखा भूख भ्रमि लागी हिरदै नाहि बीचारिओ रे ॥*
उनमत मान हिरिओ मन माही गुर का सबदु न धारिओ रे ॥
(पन्ना ३३५)

इस भूख से व्याकुल व्यक्ति लोगों को दिखाने के लिए धार्मिक वेश धारण करता है, चतुराइयां-चालाकियां करता है, लेकिन उसका मन अहंकार में लिप्त रहता है। वह ऊपर से सन्तुष्ट दिखाई देता है, मगर उसके अंदर तृष्णा की आग जलती रहती है :

भेख करै बहुतु चितु डोलै
अंतरि कामु क्रोधु अहंकारु ॥
अंतरि तिसा भूख अति बहुती
भउकत फिरै दर बारु ॥ *(पन्ना ११३२)*

मनुष्य के मन की भूख आत्मिक जीवन के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। तरह-तरह के वेश धारण करने से यह भूख समाप्त नहीं होती, बल्कि दबा देने से विकराल रूप धारण कर लेती है। वेश-भूषा का सम्बन्ध शरीर के साथ होता है। शरीर पर कोई भी वेश धारण किया जा सकता है, मगर मनुष्य अपने मन को आसानी से वश में नहीं कर सकता। इन्द्रियों को वश में करना बहुत कठिन है। मन के हठ के कारण उनको विषयों से विमुख नहीं किया जा सकता, केवल थोड़े समय के लिए दबाया जा सकता है। सांप की बिल बंद कर देने से सांप नहीं मरता, वैसे ही कामनाओं को दबा देने से अन्दर की भूख समाप्त नहीं हो जाती। भूख का शांत होना जरूरी है। इस भूख का कारण काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकार हैं। मन का सहारा लेकर ही सारे विकार प्रबल होते हैं। मन को वश में करने के लिए मन को इनसे लड़ने के लिए मजबूत बनाना पड़ता है।

सत्य, संतोष, दया, क्षमा, सहनशीलता, परोपकार की भावना आदि गुण मन को मजबूत तथा दृढ़ बना सकते हैं। गुरमति के अनुसार जीवन बनाने से ही ये गुण अन्दर पैदा हो सकते हैं। यही नहीं, गुरु द्वारा प्राप्त प्रभु के गुणों का ज्ञान ऐसी आत्मिक खुराक है जो बहुत आनंददायक है। जिस मनुष्य को प्रभु के नाम का आनन्द मिल जाये, जो नाम-रस में मग्न हो जाये, उसकी तृष्णा समाप्त हो जाती है। नाम का खजाना उसको मिलता है जिसके मन में गुरु का शबद बस जाता है :

नाम निधान तिसहि परापति
जिसु सबदु गुरू मनि वूठा जीउ ॥ *(पन्ना १०१)*

जो मनुष्य गुरु के शबद को हृदय में बसा कर गुरु-शबद के अनुसार जीवन बना लेता है, प्रभु में सुरति (ध्यान) लगाये रखता है, प्रभु के डर-अदब में रहता है, आपा-भाव त्याग कर अपने आत्मिक जीवन को जांचता-परखता रहता है, अपने अन्दर से

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का ज़हर निकालने का यत्न करता रहता है, ऐसा मनुष्य ही प्रभु के प्रेम-रंग में रंगा हुआ नाम-रस से आनन्दित होता है और उसका मन-तन शीतल हो जाता है। सहज अवस्था बन जाती है। मन के स्थिर होने से अन्दर सच्चे नाम की भूख जागृत होती है। मधुर हरि-रस से मन सन्तुष्ट रहता है। तृष्णा की आग बुझ जाती है। नाम की भूख के बिना अन्दर कोई अन्य भूख नहीं रह जाती। गुरु-वचन है :

— हरि हरि नाम की मनि भूख लगाई ॥
नामि सुनिऐ मनु त्रिपतै मेरे भाई ॥ (पन्ना ३६७)
— तिंना भुख न का रही जिस दा प्रभु है सोइ ॥
(पन्ना ३२३)
— तूं मेरो पिआरो ता कैसी भूखा ॥
तूं मनि वसिआ लगै न दूखा ॥ (पन्ना ३७६)
— हरि हरि सफलिओ बिरखु प्रभ सुआमी
जिन जपिओ से त्रिपतानी ॥
हरि हरि अंम्रितु पी त्रिपतासे सभ लाथी भूख भुखानी ॥ (पन्ना ६६७)

इसका तात्पर्य यह नहीं कि वह संसार में रहते हुये अन्न आदि का सेवन नहीं करता, धन नहीं कमाता या सामाजिक सम्बन्ध नहीं बनाता। वह संसार में रहता हुआ भी भौतिकवाद से निर्लिप्त रहता है। इन्द्रियों के रस पहले जैसे उसको बांध कर नहीं रखते। वह उन रसों के पीछे दौड़ता नहीं। इन्द्रियों का तो स्वभाव है कि वे अपने विषयों के प्रति आकर्षित होती हैं, लेकिन जिनको नाम-रस का आनन्द आने लगता है वे इन्द्रियों को रोक लेते हैं, नियंत्रित कर लेते हैं। उनको नाम-रंग के स्वाद के सामने सारे स्वाद फीके तथा व्यर्थ लगते हैं :

जा कउ आइओ एकु रसा ॥
खान पान आन नही खुधिआ
ता कै चिति न बसा ॥ रहाउ ॥
मउलिओ मनु तनु होइओ हरिआ
एक बूंद जिनि पाई ॥
बरनि न साकउ उसतति ता की
कीमति कहणु न जाई ॥ (पन्ना ६७२)

नाम-रस का आनन्द वह अवस्था है जिसमें मन की सारी भागदौड़ समाप्त हो जाती है। चिंता, तनाव धीरे-धीरे मिट जाते हैं। कोई चिंता मन को परेशान नहीं करती। माया का लालच नहीं रहता। मन में सन्तुष्टि की भावना आ जाती है। मन आह्लादित रहता है। नाम-रस का आनंद ही दुनिया के सारे रंग-तमाशे तथा सारे स्वादिष्ट पदार्थों का भोग बन जाता है :

एहो वरु एहा वडिआई इहु धनु होइ वडभागा राम ॥
एहो रंगु एहो रस भोगा हरि चरणी मनु लागा राम ॥
(पन्ना ७८१)

संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रभु की कृपा प्राप्त कर जो मनुष्य गुरमति के अनुसार अपनी जीवन-शैली बना लेता है, 'मैं' का त्याग कर प्रभु के गुण-कीर्तन में लगा रहता है, सदैव यह याद रखता है कि परमात्मा हर समय हर स्थान पर मौजूद है, उसके बहुत निकट है, नाम-सिमरन में मग्न रहता है, उसकी जीभ, कान आदि सारी इन्द्रियां सदा हरि-नाम में रंगी रहती हैं, वह दुनिया में रहता हुआ भी निर्लिप्त रहकर जीवन व्यतीत करता है। नाम-रस के आनन्द से उसके मन की सारी भूख समाप्त हो जाती है। कोई विरला जन ही ऐसा सौभाग्य प्राप्त करता है। श्री गुरु रामदास जी के अनुसार :

राम नामु सभु है राम नामा रसु गुरमति रसु रसके ॥
हरि अंम्रितु हरि जलु पाइआ सभ लाथी तिस तिस

स्त्री-सशक्तिकरण और श्री गुरु ग्रंथ साहिब

-डॉ. जसविंदर कौर*

स्त्री-सशक्तिकरण के संकल्प का क्षेत्र बहुत विशाल है और इसमें शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, बौद्धिक और सांस्कृतिक सभी प्रकार की स्वतंत्रता शामिल होती है। स्त्री-सशक्तिकरण का तात्पर्य है— महिलाओं को उनका भविष्य बनाने की स्वतंत्रता देनी। स्त्री-सशक्तिकरण पारिवारिक स्तर से आरंभ होकर जीवन के हर स्तर पर फैला होना चाहिए। प्रभावशाली और पायेदार सशक्तिकरण के लिए ज़रूरी है कि उसका आरंभ समाज की बुनियादी सोच की तबदीली से किया जाये। हमारे समाज में मादा बच्चे के विरुद्ध भेदभाव उसके जन्म के समय से ही आरंभ हो जाता है। बहुत ही कम दंपत्ति मादा बच्चे की प्राप्ति का अवसर स्वेच्छा से प्राप्त करते हैं, ख़ास कर दूसरे मादा बच्चे का। ज्यादातर दंपत्ति भ्रूण के लिंगक परीक्षण का तब तक सहारा लेते हैं, जब तक कि भ्रूण उनकी मर्ज़ी के लिंग का न हो। ऐसे लोग मादा-भ्रूण बच्चों के जन्म से पहले ही उनसे उनके जीवन का हक छीन लेते हैं। इस प्रकार मौजूदा सामाजिक वातावरण में स्त्री 'अनचाहे जन्म' और 'ममताहीन पालन-पोषण' की भागीदार बनती है। मां-बाप द्वारा बेहद पहरेदारी, बंदिशों और टोका-टाकी वाले भेदभाव भरपूर पालन-पोषण के माहौल में स्त्री का विकास आत्म-निर्भर, स्व-संचालित और स्वेच्छुक मनुष्य के तौर पर नहीं होता। बंदिशें, भेदभाव और त्रिस्कार स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा कहीं ज्यादा हीनता का भाव उत्पन्न कर देता है, जिस कारण उनके व्यक्तित्व में विश्वास और समझदारी की कमी रह जाती है।

जब लिंग-असमानता की बात की जाती है तो पहले प्रश्न यह उठता है कि इसका भावार्थ क्या है? विद्वानों का विचार है कि समान परिस्थितियों में स्त्री और पुरुष के समान कार्यों, कार्य-योग्यताओं और उम्मीदों को दो अलग-अलग मानदंडों के अनुसार परखना तथा उसके अनुसार व्यवहार करना ही लिंग-असमानता है। स्त्री-पुरुष की असमानता के सम्बन्ध में नोबल पुरस्कार प्राप्त अर्थ-शास्त्री श्री अमरत्या सेन ने जिन असमानताओं की चर्चा की है उनमें मृत्यु-दर की असमानता, जन्म-दर असमानता, बुनियादी सुविधाओं की असमानता, विशेष अवसर मिलने की असमानता, पेशेगत असमानता, संपत्ति के अधिकार की असमानता और घर के काम-काज की असमानता की तरफ संकेत किये हैं।

भारत के संविधान की भूमिका, मूल अधिकारों और राज्यों की नीति द्वारा निर्देशित सिद्धांतों में लिंगों के बीच समानता की गारंटी अंकित किये जाने के बावजूद भी हमारी विरासत और निजी कानून बेटियों व मादा-वारिसों के विरुद्ध भेदभाव करते हैं। हमारी न्याय-प्रणाली में लिंगक भेदभाव दोनों स्तर पर ही होता है— कानून की संरचना के स्तर पर भी

*भूतपूर्व प्रोफेसर, गुरु नानक अध्ययन विभाग, गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी, श्री अमृतसर—१४३००१, फोन : ९५०१०-५५४४५

और कानून लागू करने के स्तर पर भी।

स्त्रियों के विरुद्ध भेदभाव के अंत और उनके सशक्तिकरण हेतु सबसे पहले उठाने योग्य कदम हैं— उनको उनके मौजूदा अधिकारों और उनकी सीमाओं के बारे में अवगत करवाना। अगला कदम होगा स्त्रियों को उनके अधिकारों की रक्षा के लिए कानूनी सहायता मुफ़्त मुहैया करवाना। सबसे अधिक ज़रूरत पुरुषों को समझाने की है कि क्या कानून की नज़रों में स्त्रियां उनके बराबर हैं। संयुक्त राष्ट्र के आबादी फंड के कार्यकारी निर्देशक डा. नफीस सादिक के अनुसार, ''पुरुषों की सोच में बड़े परिवर्तन के बिना महिलाओं के हक में महत्वपूर्ण परिवर्तन संभव ही नहीं।''

हर रोज़ महिलायें घरों, कार्य-स्थलों और समाज में पुरुषों द्वारा जिस्मानी जुल्म, छेड़छाड़, मानसिक परेशानी, दुर्व्यवहार की शिकार होती हैं। विश्व भर में अनपढ़ता, ग़रीबी और असमानता के शिकार लाखों लोग अपनी नाबालिग बच्चियों को शारीरिक व्यापार या बाल-विवाह की बली चढ़ाते हैं। कई बार उनकी उम्र से तीन गुणा बड़ी उम्र के पुरुषों के साथ उनका विवाह कर दिया जाता है। गर्भवती स्त्रियों एवं बच्चियों के लिए ज़रूरी स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, सती-प्रथा, स्त्रियों का नग्नवाद, दहेज से सम्बन्धित अत्याचार आदि स्त्री-समाज के विरुद्ध संगीन जुर्म प्रमुख हैं।

चाहे स्त्री की समाज में सदा ही केंद्रीय भूमिका रही है, परन्तु प्राचीन समय से ही स्त्री को शारीरिक असमानता, कठोर भेदभाव, जिस्मानी एवं मानसिक दुर्व्यवहार का सामना करना पड़ा है। हमारे संविधान तथा मानवीय अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय घोषणा-पत्र में सुरक्षित मूलभूत अधिकारों से भी वंचित रहना पड़ा है, क्योंकि स्त्रियां विश्व आबादी का लगभग आधा हिस्सा हैं और मानवीय समाज की गाड़ी का दूसरा पहिया। उनके अधिकारों की रक्षा के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जद्दोजहद के लिए जंग ज़रूरी है।

स्त्री को कमज़ोर कहा जाता है और कहावत भी है कि ''दुर्बलता का दूसरा नाम स्त्री है।'' जन्म से मरण तक स्त्री को निजी संपत्ति का दर्जा दिया जाता है। विवाह से पहले मां-बाप की तरफ से और उसके बाद पति और पुत्रों की तरफ से। लिंगक भेदभाव जीवन के हर क्षेत्र में मौजूद है। मिसाल के तौर पर भारतीय फ़ौज के लगभग ३४००० अफसरों में केवल ६०० के करीब ही स्त्रियां हैं। लगभग सारे ही विश्व में फैला यह भेदभाव इस बात से भी ज़ाहिर है कि विश्व के १९० मुल्कों में केवल १७ मुल्कों में ही स्त्रियां प्रधान या प्रधानमंत्री बन सकी हैं। चाहे लगभग हर देश में स्त्रियों के आरक्षण से सम्बन्धित उपबंध मौजूद हैं और कहीं भी कानून में पुरुषों और स्त्रियों के बीच भेदभाव का उपबंध देखने में नहीं आता, फिर भी व्यवहारिक स्तर पर रोज़मर्रा की ज़िंदगी में स्त्रियों को दूसरा या निचला दर्जा दिया जाता है तथा कई मूलभूत अधिकारों से वंचित रखा जाता है।

स्त्री-पुरुष में ऐसी असमानतायें भारतीय और विदेशी सभ्यताओं में प्राचीन काल से ही देखने में आती हैं। भारतीय परंपरा के संदर्भ में स्त्री आदि काल से ही तिरस्कार का पात्र रही है। मनु स्मृति में कहा गया है कि पत्नी बिना पति के और पति की आज्ञा के बिना कोई धार्मिक कार्य नहीं कर सकती। स्त्री को घर की सीमा में ही रहना चाहिए और उसे केवल घरेलू शिक्षा ही दी जानी चाहिए। स्त्री को

सिर्फ़ अपने पति की सेवा करनी चाहिए, क्योंकि वह उसके सुख और मनोरंजन के लिए साधन-मात्र है। मनु स्मृति में स्त्री को पाप की तरफ प्रेरित करने वाली भी माना गया है और पुरुष को उससे दूर रहने की चेतावनी दी गई है। प्राचीन भारतीय धर्म-शास्त्रीय सामाजिक व्यवस्था में पुत्री का स्थान पुत्र की बजाय निम्न माना गया है। वैदिक युग में भी पुत्र-प्राप्ति परिवार के लोगों को ज्यादा ख़ुशी प्रदान करती थी।

नाथ-योगियों के प्रभाव से स्त्री की दशा में और पतन आया तथा मुसलमानों के भारत में आने से पर्दे की प्रथा का प्रचलन हुआ। समय के साथ लड़कियों को मारने के साथ-साथ बाल-विवाह और सती-प्रथा का भी प्रचलन हो गया। विधवा स्त्री की हालत बुरी हो गई। बहु-पत्नी विवाह का प्रचलन हुआ, परन्तु विधवा स्त्री को विवाह का अधिकार न दिया गया। अगर विशेष हालत में स्त्री को पति के देहांत के उपरांत जीने का अधिकार दिया भी जाता था तो उसे बहुत सख़्त अनुशासन में रहना पड़ता था, जहां उसे किसी प्रकार की स्वतंत्रता और समानता का अधिकार नहीं था।

भारत ही नहीं, विदेशों में भी स्त्री की स्थिति कोई ज्यादा सुखदाई नहीं थी। प्लेटो जैसे महान दार्शनिक ने भी परमात्मा की सबसे बड़ी कृपा यह मानी है कि परमात्मा ने उसका निर्माण स्वतंत्र मानव के रूप में किया, ग़ुलाम के रूप में नहीं और दूसरी कृपा यह मानी कि उसे पुरुष बनाया, स्त्री नहीं। अरस्तु ने स्त्री की परिभाषा यह कह कर दी कि कुछ गुणों की कमी के कारण ही स्त्री बनती है। हमें स्त्री के स्वभाव से ही यह समझना चाहिए कि प्राकृतिक रूप से उसमें कुछ कमियां हैं। उसने स्त्री को एक निष्क्रिय पदार्थ माना और पुरुष को शक्ति, गति और जीवन। रोमन कानून में स्त्री को बेवकूफ़ और असंतुलित कहा है। इस कानून के अनुसार स्त्री को निगरानी में रखना चाहिए, जिससे उसकी मूर्खता पर लगाम लगाई जा सके। संत अगस्तीन का कथन है कि स्त्री न स्थिर है और न दृढ़ संकल्प। कैनन का कानून स्त्री को शैतान का रास्ता कहता है और कुरान भी स्त्री की बहुत उपेक्षा करती है। बायबल में संत पॉल के अनुसार भी स्त्री पुरुष के लिए बनी है और पुरुष स्त्री के लिए नहीं। १६वीं सदी से १८वीं सदी तक स्त्री का सामाजिक स्तर बहुत निचला होता गया, जिसका कारण था— धार्मिक कट्टरता। कालविन के समर्थन का भी प्रभाव पड़ा, जिसके अनुसार स्त्री का पुरुष के अधीन होना ईश्वर का फरमान था। हालात इस कद्र ख़राब थे कि स्त्रियों को वोट डालने तक का अधिकार नहीं था। १७८९ ई. की फ्रांसीसी क्रांति को उत्साहित किया और फिर फ्रांस, इंग्लैंड एवं अमेरिका जैसे देशों में लिंग के भेदभाव के बिना स्वतंत्रता, समानता और मानवीय अधिकारों के बारे में मांग होने लगी। स्त्रीवाद से सम्बन्धित कई जत्थेबंदियां २०वीं सदी तक अस्तित्व में आईं, जिनमें स्त्री-मुक्तिवाद (Women Liberation, Women Emancipation), स्त्री-संवेदना (Women Sensibility), स्त्री-सशक्तिकरण (Women Empowerment) विशेष महत्व रखती हैं। स्त्री-सशक्तिकरण का नारा १९७०-८० ई. से आरंभ हुआ और १९९० ई. तक इसकी तेज़ी के साथ महत्ता बढ़ी। नारी-सशक्तिकरण का संकल्प यह मान कर चलता है कि समाज के नज़रिए और उद्देश्यों में प्रचंड, गतिशील और लोकतंत्रवादी परिवर्तन लाना आवश्यक है। स्त्री-सशक्तिकरण

समाज की निरंतर तरक्की के लिए ज़रूरी है। निरंतर तरक्की में मानव-जीवन से सम्बन्धित तत्वों, जैसे- सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, वातावरण संबंधी और आध्यात्मिकता में संतुलन जरूरी है। समाज की निरंतर प्रगति के लिए स्त्री की समानता, सामाजिक न्याय और स्वतंत्रता गतिशील रोल अदा करते हैं। स्त्री-सशक्तिकरण के लिए स्त्री का मनोवैज्ञानिक, आर्थिक और राजनीतिक पक्ष सशक्त होना आवश्यक है। स्त्री को सशक्त करने के लिए आर्थिक और सामाजिक अधिकार, जीविका का अधिकार, अपना भविष्य निर्धारित करने का अधिकार होना चाहिए। इस प्रकार स्त्री-सशक्तिकरण का अर्थ हुआ— उसे प्रशिक्षण देकर योग्य बनाना, उसकी भलाई के लिए कार्य करने और सहायक सेवाएं प्रदान करना। उसमें जागृति पैदा करनी। स्त्री-सशक्तिकरण का उद्देश्य है— स्त्री को स्वतंत्र तथा आत्मनिर्भर बनाना। स्त्री को अपने जीवन पर अधिकार, अपनी शक्ति पर विश्वास, अपनी योग्यता पर यकीन, शारीरिक हिंसा पर स्वतंत्रता, अपोषण और रोगों से निवारण के योग्य होना चाहिए।

भारत में १९वीं सदी में स्त्रीवादी चिंतन को देखा जा सकता है। इस सदी के पिछले आधे दशक के आरंभ में ईश्वर चंद्र विद्यासागर के यत्नों से १८५६ ई. में विधवा विवाह के हक में और १८९० ई. में सती-प्रथा के विरोध में बिल पास हुआ, परन्तु हैरानी की बात है कि स्त्री से सम्बन्धित इन पक्षों के बारे में श्री गुरु नानक साहिब ने आवाज़ १५वीं सदी में उठाई थी। गुरु साहिबान ने स्त्री की समानता के लिए गुरबाणी को आधार बनाया। यह अपने आप में अद्वितीय कदम था। गुरु साहिबान ने स्त्री के हक में जब आवाज़ उठाई, उस समय स्त्री की हीनता को स्वाभाविक माना जाता था। यह उस समय के अनुसार क्रांतिकारी कदम था, विलक्षण परिवर्तन का मार्ग था, भावात्मक दृष्टिकोण था, जिसका आधार सारी मानवता को एक ही समझने का आदर्श था।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी में गुरु साहिबान ने अपने आप को, सभी जीवों को और आत्मा को पत्नी के रूप में तसव्वर किया तथा परमात्मा को पति के रूप में। इसी सम्बन्ध में गुरबाणी का फरमान है :

इसु जग महि पुरखु एकु है होर सगली नारि सबाई ॥ (पन्ना ५९१)

गुरबाणी ने सुहागिन, सुलखणी (सुलक्षणी), सुचजी (सभ्य), सचिआर (सच्चा) बनने के दो मार्ग सुझाए हैं। वे केवल स्त्रियों के लिए नहीं, बल्कि समूह मानवता के लिए हैं, बिना किसी जाति, नस्ल और लिंग-भेदभाव के। गुरबाणी में सब मनुष्यों को सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में बराबर का दर्जा दिया गया है, क्योंकि गुरु साहिबान सभी मनुष्यों में एक परमात्मा के अंश को स्वीकार किया है :

सभना जीआ इका छाउ ॥ (पन्ना ८३)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित भक्त कबीर जी की बाणी में स्त्री और पुरुष की समानता के बारे में स्पष्ट कहा गया है :

एते अउरत मरदा साजे ए सभ रूप तुम्हारे ॥

(पन्ना १३४९)

'आसा की वार' में श्री गुरु नानक साहिब ने स्त्री की महानता के बारे में बयान करते हुए फरमाया है कि पुरुष स्त्री से जन्म लेता है, स्त्री के साथ ही सगाई और विवाह होता है, स्त्री के द्वारा ही अन्य रिश्तेदारियां बनती हैं, स्त्री से ही जगत की उत्पत्ति का सिलसिला चलता है और अगर पहली स्त्री मर

जाये तो पुरुष दूसरी स्त्री की खोज करता है। राजाओं-महाराजाओं की जन्म-दाती भी स्त्री ही है। फिर इसे मंदा (बुरा) क्यों कहा जाये ?

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ॥
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ॥
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥

(पन्ना ४७३)

गुरु साहिबान ने प्रभु-प्राप्ति के लिए गृहस्थ जीवन को रुकावट अस्वीकार कर यह सिद्ध किया है कि स्त्री को पाप और बुराई का कारण समझना गलत है। उन्होंने सन्यास के मार्ग का समर्थन करने वालों की तरफ से गृहस्थ जीवन के त्याग का पुरज़ोर निषेध किया है और योगियों आदि की निंदा इसलिए भी की कि वे अपना घर-बार त्याग कर दूसरों के घर से मांग कर रोटी खाने जाते हैं और दूसरों की स्त्रियों को बुरी नज़र से देखते हैं। इस प्रकार उनको परमात्मा कैसे मिल सकता है ? गुरमति के अनुसार गृहस्थ जीवन में रह कर नेक कमाई करनी, बांट कर खाना और संसार के व्यवहारों को भली-भांति करते हुए, हर समय अपने मालिक को याद रखना ही उत्तम मनुष्य के गुण हैं। जीव को गृहस्थ में रह कर ही परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है :

सतिगुर की ऐसी वडिआई ॥
पुत्र कलत्र विचे गति पाई ॥ *(पन्ना ६६१)*

गुरबाणी में अपने साथी के प्रति वफ़ादार रहने को बहुत अहमियत दी गई है और दूसरे के साथी के प्रति झुकाव की निंदा की गई है। श्री गुरु नानक साहिब का फरमान है :

पर घरि चीतु मनमुखि डोलाइ ॥
गलि जेवरी धंधै लपटाइ ॥ *(पन्ना २२६)*

श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं :

जैसा संगु बिसीअर सिउ है रे तैसो ही इहु पर ग्रिहु ॥

(पन्ना ४०३)

इस प्रकार गुरु साहिबान ने पर-गामी होने की निंदा की और अपने आप को नियंत्रण में रखने की हिमायत की।

श्री गुरु नानक साहिब ने 'आसा की वार' में सूतक की मान्यता का खंडन किया। सूतक की मान्यता के अनुसार बच्चे के जन्म से कुछ दिन बाद तक स्त्री को अपवित्र समझा जाता है। श्री गुरु नानक साहिब के अनुसार अगर यह मान लिया जाये कि सूतक का परहेज़ रखना ज़रूरी है, तो कोई भी जगह सूतक-रहित नहीं है। उपले और लकड़ी में भी कीड़े होते हैं और वे जन्म लेते व मरते रहते हैं। अन्न के जितने भी दाने हैं, वे भी जीवों के बिना नहीं हैं। पानी भी जीव है, क्योंकि इससे ही सबका जीवन हरा-भरा रहता है। सूतक का परहेज़ पूर्ण रूप से करना बहुत कठिन है, क्योंकि इससे ही सब जीव हरे रहते हैं। सूतक का परहेज़ पूर्ण रूप से करना बहुत कठिन है, क्योंकि हर समय रसोई में सूतक पड़ा रहता है। सूतक को नैतिकता के साथ जोड़ते हुए श्री गुरु नानक साहिब फरमान करते हैं कि मन का सूतक लोभ है, जीभ का सूतक झूठ है, आँखों को पराया धन और पराया रूप देखने का सूतक चिपका हुआ है। कानों का सूतक चुगली सुनना है। अगर परहेज़ करना ही है तो उन सूतकों से करो जो केवल स्त्रियों को ही नहीं, बल्कि सब मनुष्यों को चिपके हुए हैं। जिनको आप सूतक कहते हो वे तो भ्रम के अलावा और कुछ नहीं, क्योंकि जन्म-मरण तो परमात्मा का हुक्म है। प्रभु की रज़ा में ही जीव जन्म लेता

और मरता है :

जे करि सूतकु मंनीऐ सभ तै सूतकु होइ ॥
गोहे अतै लकड़ी अंदरि कीड़ा होइ ॥
जेते दाणे अंन के जीआ बाझु न कोइ ॥
पहिला पाणी जीउ है जितु हरिआ सभु कोइ ॥
सूतकु किउ करि रखीऐ सूतकु पवै रसोइ ॥
नानक सूतकु एव न उतरै गिआनु उतारे धोइ ॥१ ॥
म:१ ॥ मन का सूतकु लोभु है जिहवा सूतकु कूड़ु ॥
अखी सूतकु वेखणा पर त्रिअ पर धन रूपु ॥
कंनी सूतकु कंनि पै लाइतबारी खाहि ॥
नानक हंसा आदमी बधे जम पुरि जाहि ॥२ ॥

(पन्ना ४७२)

स्त्रियों से सम्बन्धित एक और समस्या सती-प्रथा के विरुद्ध श्री गुरु अमरदास जी ने आवाज़ उठाई। उन्होंने सती शब्द की परिभाषा ही बदल दी। उन्होंने सच्चे अर्थों में सती होने की विधि समझाते हुए फरमान किया :

सतीआ एहि न आखीअनि
जो मड़िआ लगि जलंन्हि ॥
नानक सतीआ जाणीअन्हि
जि बिरहे चोट मरंन्हि ॥१ ॥
म:३ ॥भी सो सतीआ जाणीअनि सील संतोखि रहंन्हि ॥
सेवनि साई आपणा नित उठि संम्हॉलंन्हि ॥२ ॥

(पन्ना ७८७)

इसी प्रसंग में श्री गुरु अरजन देव जी का फरमान है :

देखा देखी मनहठि जलि जाईऐ ॥
प्रिअ संगु न पावै बहु जोनि भवाईऐ ॥२ ॥
सील संजमि प्रिअ आगिआ मानै ॥
तिसु नारी कउ दुखु न जमानै ॥३ ॥
कहु नानक जिनि प्रिउ परमेसरु करि जानिआ ॥
धंनु सती दरगह परवानिआ ॥ *(पन्ना १८५)*

यह श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षाओं का ही प्रभाव है कि पंजाब में पिछली सदी में सती की कोई घटना नहीं घटी, जबकि राजस्थान आदि राज्यों में आज के समय में भी सती होने की घटनाएं घटती रहती हैं।

गुरु साहिबान ने सभी मनुष्यों को *''घालि खाइ किछु हथहु देइ''* का आदर्श अपनाने का आदेश दिया। उनके द्वारा दिखाए समानता, स्वतंत्रता और न्याय के सद्गुण स्त्री-पुरुष की हर क्षेत्र में समता की हिमायत के सूचक बने। श्री गुरु नानक साहिब ने स्त्री-पुरुष को, पत्नी-पति को *''एक जोति दुइ मूरती''*का आदर्श अपनाने के लिए कहा है।

सिक्ख धर्म धार्मिक और आध्यात्मिक मार्ग पर चलने के लिए हरेक को पूर्ण स्वतंत्रता देता है, चाहे वो स्त्री है या पुरुष। सिक्ख धर्म मनमति अर्थात् झूठ, पाखंड, दिखावा, वहम-भ्रम, जादू-टोना आदि कर्मकांडों का त्याग कर भक्ति-मार्ग को अपनाने का संदेश देते हुए स्त्रियों पूर्ण सम्मान देता है :

कबीर त्रिप नारी किउ निंदीऐ
किउ हरि चेरी कउ मानु ॥
ओह मांग सवारै बिखै कउ ओह सिमरै हरि नामु ॥

(पन्ना १३७३)

गुरबाणी सारी मानवता को अपने अंदर से मनोवैज्ञानिक तौर पर सशक्त बनने की प्रेरणा देती है। वह जीव को विषय-विकारों से मुक्त होकर नैतिक जीवन-मूल्य अपनाने का उपदेश देती है। वह स्त्री-पुरुषों को अच्छे कर्म करने के लिए प्रेरित करती है, क्योंकि अंतत: निपटारा तो कर्मों के अनुसार ही होना है, लिंग, वर्ण या वर्ग के आधार पर नहीं :

मतु को जाणै जाइ अगै पाइसी ॥

जेहे करम कमाइ तेहा होइसी ॥ (पन्ना ७३०)

सिक्ख इतिहास पर नज़र मारने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गुरु साहिबान ने न सैद्धांतिक रूप से और न ही व्यवहारिक रूप से स्त्री को निचला या दोयम दर्जा दिया। उन्होंने सैद्धांतिक रूप से जो कहा उसे अमली जामा भी पहनाया। श्री गुरु नानक साहिब के समय से लेकर दसम पातशाह तक सभी गुरु साहिबान को अपने मिशन की पूर्ति के लिए लम्बी प्रचार फेरियों पर जाना पड़ा और कई दुखदायी संघर्ष करने पड़े। ऐसे समय में गुरु के महिल (सुपत्नी) परिवार की ज़िम्मेदारी संभालने के अलावा गुरुद्वारा साहिबान और संगत की सेवा-संभाल सुचारू रूप से कर पूर्ण योगदान देते रहे। श्री गुरु नानक साहिब ने जब उदासियों के पश्चात करतारपुर साहिब आकर धरमसाल बना कर संगत के मार्गदर्शन का कार्य आरंभ किया, तो धरमसाल और लंगर का प्रबंध माता सुलक्खणी जी ही करते थे। करतारपुर साहिब संगत में स्त्री-पुरुष इकट्ठा बैठ कर प्रभु-भक्ति करते थे, लंगर छकते थे। करतारपुर साहिब में स्त्री और पुरुष इकट्ठा सेवा करते। यह भेदभाव भी नहीं किया जाता था कि कौन-सा काम कौन करेगा। दोनों पानी भरते, अनाज बीनते, पीसते, खाना बनाते और बर्तन मांजते थे।

श्री गुरु अंगद देव जी की सुपत्नी माता खीवी जी द्वारा श्रद्धा और प्यार के साथ की गई लंगर की सेवा का प्रमाण तो श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी मिल जाता है। इसी तरह बीबी भानी जी, माता सुंदरी जी तथा माता साहिब कौर जी ने सिक्ख संस्थाओं और संगत के क्रमश: संचालन एवं रहनुमाई के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया, जो सिक्ख इतिहास के कीमती और अभिन्न अंग हैं। श्री गुरु अमरदास जी द्वारा पर्दे और सती की प्रथा ख़त्म की गई। श्री गुरु अमरदास जी ने प्रचार मंतव्य के लिए जो 'बाईस मंजियां' और 'बावन' पीढ़े' स्थापित किये उनमें से कुछ की ज़िम्मेदारी महिलाओं को सौंपी गई। माता मनसा देवी जी और माता किशन कौर जी अपने गुरु-पतियों के साथ प्रचार फेरी पर भी जाते रहे। गुरु-महिलों ने पंथ की ख़ातिर जो कुर्बानियां दी हैं, उनसे सिक्ख इतिहास भरा पड़ा है।

गुरु-महिलों के अलावा माता भागो जी, रानी सदा कौर, महारानी जिंदां आदि जैसे कई नाम सिक्ख इतिहास में सदा अमर रहेंगे। सत्रहवीं सदी में सिक्ख स्त्रियों ने त्याग और बलिदान की जो मिसाल कायम की, वह सिक्ख पंथ की अरदास में रोज़ाना याद की जाती है। इतिहास गवाह है कि सिक्खों द्वारा संकटग्रस्त स्त्रियों के सम्मान की रक्षा बिना किसी भेदभाव के की जाती रही है।

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि स्त्रियां सारी मानवता का आधा हिस्सा हैं। स्त्री और पुरुष परिवार की दो ऐसी इकाइयां हैं, जिनकी एकसुरता से ही परिवार सुचारू रूप से चल सकता है। इस एकसुरता के लिए संतुलन अति ज़रूरी है और संतुलन के लिए स्त्री-पुरुष की समानता को स्वीकार करना भी। समाज को उन्नति के मार्ग पर ले जाने के लिए यह भी ज़रूरी है कि स्त्री और पुरुष की समानता को स्वीकार किया जाये और उनको जीवन के हर क्षेत्र में बराबर की महत्ता दी जाये। जब तक समाज का यह आधा हिस्सा, जिसे कई सदियों तक उपेक्षित किया जाता रहा है, उन्नत नहीं होगा, तब तक समाज का समूचा विकास संभव नहीं होगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि किसी देश की सभ्यता का अनुमान वहां की स्त्रियों की सामाजिक स्थिति से ही लगाया जा

सकता है। यही कारण है कि समाज में स्त्रियों की स्थिति, उनकी समस्याएं हमेशा चिंतन का विषय बनी रही हैं और जब तक लिंग-असमानता पूरी तरह ख़त्म नहीं हो जाती यह विषय बना ही रहेगा। स्त्री-सशक्तिकरण के लिए कुछ ज़रूरी नुक्ते:

- ऐसा वातावरण पैदा करना, जिसमें स्त्रियां अपनी संपूर्ण सामर्थ्य को पहचान सकें और घर तथा देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक फ़ैसलों में बराबर की भागीदार हो सकें।
- स्वास्थ्य-सेवाओं, शिक्षा, रोज़गार और वेतन से सम्बन्धित स्त्रियों को समानता प्रदान करनी।
- स्त्रियों को उनके अधिकारों से और उस कानून प्रणाली से अवगत करवाना, जिसका उद्देश्य उनके विरुद्ध हर प्रकार के भेदभावों को ख़त्म करना है।
- स्त्रियों के विरुद्ध समाज की सोच में परिवर्तन लाना।
- स्त्रियों की संस्थायें स्थापित करना और उनको मज़बूत बनाना।

स्त्रियों का पुरुषों से पिछड़ेपन का सबसे बड़ा कारण है उनकी निर्बलता या शक्तिहीनता। संसद, सार्वजनिक क्षेत्र, मीडिया जगत तथा अन्य निर्णय-अधिकारिक संस्थाओं में वे बहुत कम संख्या में हैं। इसी कारण उनके लाभ हेतु आवश्यक मात्रा में वित्तीय निर्धारणा नहीं होती रही और उनके बहुपक्षीय विकास से सम्बन्धित कार्यक्रम कभी भी ज़रूरत के अनुसार चालू नहीं होते रहे। लिंग-भेदभाव ख़त्म कर (ख़ास तौर पर ग्रामीण इलाकों में) स्त्रियों के जीवन का स्तर ऊंचा उठाने के लिए, सार्वजनिक चेतना और राजनीतिक नीयत में आवश्यक परिवर्तन की ज़रूरत है। जब तक गरीबी दूर नहीं होती और शाक्षरता के लक्ष्यों में प्राप्ति सौ प्रतिशत नहीं होती, स्त्रियों के लिए मानवीय अधिकारों की प्राप्ति अधूरा स्वप्न ही रहेगा। सबसे अंतिम, परन्तु सबसे महत्वपूर्ण ज़रूरत है—स्त्रियों में अपने अधिकारों के लिए जागृति की उत्पत्ति। जब तक स्त्रियां स्वयं आगे बढ़ कर अपनी मदद खुद नहीं करती, तब तक किसी ने भी उनकी मदद नहीं करनी, जैसे कि पंजाबी की प्रसिद्ध कवियत्री अंम्रिता प्रीतम की कविता कहती है :

हक्क जिन्हां दे आपणे, आपे लैणगे खोह।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षाओं को व्यवहारिक रूप देकर ही स्त्रियों के सशक्तिकरण में योगदान दिया जा सकता है। सिक्ख इतिहास इस बात का गवाह है कि स्त्रियों ने सिक्ख पंथ के संगठन में अहम भूमिका निभाई है, जिसे श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षाओं का प्रभाव ही माना जा सकता है। आज के समाज में स्त्री-सशक्तिकरण के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संदेश को जीवन में अपनाने की

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री के विविध रूपों की महिमा

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री के लिए जो संबोधन शब्द प्रयोग किये गये हैं, वे गुरबाणी और गुरमति में प्रकट स्त्री के विशेष महत्व को दर्शाते हैं। भक्त नामदेव जी और भक्त धंना जी ने पत्नी को 'घर की गीहनि' कहा है। श्री गुरु नानक देव जी का अपनी सुपत्नी माता सुलक्खणी जी को 'पारजात घर आंगन मेरे' कहना, भाई बलवंड जी की बाणी 'वार रामकली' में माता खीवी जी को 'नेकजन' कह कर पुकारना और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा स्त्री को 'ईमान' कहना वास्तव में स्त्री के अति विशिष्ट सम्मान का ही प्रतीक हैं।

स्त्री समस्त कार्य-व्यवहार की धुरी : श्री गुरु नानक देव जी ने स्त्री को समस्त सांसारिक कार्य-व्यवहार की धुरी माना है। 'आसा की वार' की अत्यंत प्रसिद्ध और लोकप्रिय पउड़ी *''भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ''* में गुरु जी ने फरमाया है कि पुरुष स्त्री से ही उत्पन्न होते हैं, स्त्री के साथ विवाह कर जीवन व्यतीत करते हैं, समाज के सारे कार्य-व्यवहार स्त्री से ही चलते हैं। जो राजाओं को भी जन्म देती है, वो स्त्री बुरी कैसे हो सकती है ?

गुरु जी ने स्पष्ट किया है कि स्त्री समस्त सृष्टि की जननी है। जिन मुखों से स्त्री की प्रशंसा निकलती है वे मुख अकाल पुरख की सच्ची दरगाह में सदैव उजले रहते हैं।

स्त्री-पुरुष की समानता : श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री-पुरुष को हर तरह से समान माना गया है। स्त्री-पुरुष अकाल पुरख से उत्पन्न हैं, अत: उनमें कोई भेद नहीं है। श्री गुरु रामदास जी फरमाते हैं:

माई बाप पुत्र सभि हरि के कीए॥ (पन्ना ४९४)

तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी ने भी स्त्री-पुरुष में समानता की पुष्टि करते हुए फरमाया है कि असली स्त्री-पुरुष वे ही हैं जो 'दो शरीर और एक आत्मा' के रूप में जीवन गुजारते हैं :

धन पिरु एहि न आखीअनि बहनि इकठे होइ॥
एक जोति दुइ मूरती धन पिरु कहीऐ सोइ॥

(पन्ना ७८८)

स्त्री : सामाजिक नैतिकता का आधार : श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री को सामाजिक नैतिकता का आधार माना गया है। यहां बहु-पत्नित्व के स्थान पर 'एक पति-एक पत्नी' के सिद्धांत को श्रेष्ठ माना गया है। एक नारी वाले को यति मानते हुए स्पष्ट कठोर शब्दों में कथन किया गया है कि पर-स्त्री से संबंध रखने वाला कामान्ध हो जाता है। वह सभी अच्छाइयों को गंवा कर विनाश को प्राप्त होता है :

घर की नारि तिआगै अंधा॥
पर नारी सिउ घालै धंधा॥
जैसे सिंबलु देखि सूआ बिगसाना॥
अंत की बार मूआ लपटाना॥१॥
पापी का घरु अगने माहि॥
जलत रहै मिटवै कब नाहि॥ (पन्ना ११६४)

पत्नीव्रता व्यक्ति काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से बचा रहता है और शील, संयम में रहकर समाज की सर्वपक्षीय तरक्की में भूमिका निभाता है।

स्त्री : माँ के रूप में महिमा : गुरबाणी में स्त्री के माँ के रूप को अत्यंत महत्व प्रदान किया गया है। *''माता मति पिता संतोखु''* का भाव यही है कि 'मति' देने वाली माता ही है। जैसे धरती दे-दे कर थकती नहीं, सहनशील-क्षमाशील बनी रहती है, उसी प्रकार माँ भी निस्पृह भाव से

**१/३३८, स्वप्नलोक, दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, फोन : ९४१७२-७६२७१*

संतान को दान दे-देकर नहीं थकती।

श्री गुरु अरजन देव जी 'माता की आसीस' को हर समय याद रखते हुए कथन करते हैं कि वे जो कुछ भी हैं, माता (बीबी भानी जी) के आशीर्वाद से ही हैं :

पूता माता की आसीस ॥
निमख न बिसरउ तुम्ह कउ हरि हरि सदा भजहु जगदीस ॥
(पन्ना ४९६)

'रामकली की वार' में भाई बलवंड जी श्री गुरु अंगद देव जी की सुपत्नी माता खीवी जी के मातृ-प्रेम से संवेदित होकर कहते हैं कि माता खीवी जी अपने पति के समान ही नेक हैं। श्री गुरु अंगद देव जी तो सतसंग रूपी लंगर लगाकर नाम की दौलत बांट रहे हैं, वहीं माता खीवी जी लंगर की सेवा-संभाल कर हम जरूरतमंदों को घी, खीर, चीनी बांट रहे हैं :

बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अंम्रितु खीरि घिआली ॥
(पन्ना ९६७)

स्त्री : बहन के रूप में महिमा : इसी प्रकार गुरबाणी में बहन के रूप में भी स्त्री के दिव्य रूप का चित्रण हुआ है। श्री गुरु नानक देव जी और बेबे नानकी जी का पारस्परिक प्रेम इसकी स्पष्ट मिसाल है। भाई-बहन के इसी प्रेमपूर्ण संबंध से प्रेरित होकर प्रथम पातशाह ने जीव-आत्मा और शरीर के लिए इस प्रतीक का प्रयोग किया है :

बीरा बीरा करि रही बीर भए बैराइ ॥
बीर चले घरि आपणै बहिण बिरहि जलि जाइ ॥
(पन्ना ९३५)

स्त्री : बेटी के रूप में महिमा : माता, बहन और पत्नी के बाद स्त्री का चौथा रूप 'बेटी' है। स्त्री के इस अत्यंत महत्वपूर्ण रूप को भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब मे संपूर्ण सम्मान प्रदान किया गया है।

सिक्ख इतिहास में श्री गुरु अमरदास जी की सुपुत्री बीबी भानी जी की पिता के प्रति श्रद्धा, प्रेम, सेवा, एक बड़ा उदाहरण है, जो गुरमति में बेटी के रूप में स्त्री के महत्व को दर्शाता है।

गुरबाणी की स्पष्ट अवधारणा है कि जिस घर में बेटी नहीं होती, उस घर के नैतिक मूल्यों का स्तर बहुत नीचा होता है। ऐसे घर में सद्‌गुण पल्लवित नहीं हो पाते। दूसरी ओर जिस घर में बेटी होती है वहां उसे स्नेह देने का प्रयास किया जाता है, जिससे घर में सुंदर नैतिक वातावरण सृजित होता है। श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है :

बाबुल कै घरि बेटड़ी बाली बालै नेहि ॥
(पन्ना ९३५)

इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नारी के समस्त रूप की महिमा का मुक्त कंठ से गान किया गया है।

यही नहीं, सती-प्रथा, कन्या-हत्या, पर्दा-प्रथा, बहु-विवाह, दहेज-प्रथा आदि जैसी स्त्री-विरोधी सामाजिक बुराइयों का श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जबरदस्त विरोध और खंडन किया गया है :

— सतीआ एहि न आखीअनि जो मड़िआ लगि जलंन्हि ॥
(पन्ना ७८७)
— रहु रहु री बहुरीआ घूंघटु जिनि काढै ॥
(पन्ना ४८४)
— होरि मनमुख दाजु जि रखि दिखालहि सु कूड़ु अहंकारु कचु पाजो ॥ (पन्ना ७९)

इसके विपरीत गुरमति में विधवा-विवाह का समर्थन किया गया है। भाई कान्ह सिंघ नाभा के ग्रंथ 'गुरमति मारतंड' (भाग दो) के पृष्ठ ८३१ पर ज़िक्र किया गया है कि श्री गुरु अरजन देव जी ने बैहड़वाल के भाई हेमे का विवाह एक विधवा स्त्री के साथ करवाया था।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री की महिमा का बड़ा प्रभावशाली वर्णन किया गया है। स्त्री को पुरुष के बराबर मानते हुए उसे समस्त मानवाधिकारों की अधिकारिणी स्वीकार किया गया है।

गुरबाणी चिंतनधारा . . . १२८

सिध गोसटि : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

गुरमुखि सासत्र सिम्रिति बेद ॥
गुरमुखि पावै घटि घटि भेद ॥
गुरमुखि वैर विरोध गवावै ॥
गुरमुखि सगली गणत मिटावै ॥
गुरमुखि राम नाम रंगि राता ॥
नानक गुरमुखि खसमु पछाता ॥३७ ॥

(पन्ना ९४२)

३७वीं पउड़ी में श्री गुरु नानक देव जी ने गुरु के हुक्म को मानना सर्वोत्तम बतलाया है। गुरु जी के चिन्तनानुसार गुरु के हुक्म में चलना ही समस्त धर्म-ग्रंथों का ज्ञान है। इस ज्ञान की बदौलत ही वैर-विरोध की भावना का समूल विनाश होता है। इस प्रकार निरवैर हुए जीव की ईश्वर से गहरी निकटता बन जाती है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जो व्यक्ति गुरु-दर्शाये मार्ग पर चलता है वह शास्त्र, स्मृतियों तथा वेदों का ज्ञाता हो जाता है अर्थात् गुरु के हुक्म में चलना ही धर्म-ग्रंथों का ज्ञान प्राप्त करना है। गुरु के हुक्म में चल कर ही जीव घट-घट में व्याप्त परमात्मा के रहस्य को जान लेता है। गुरमुख व्यक्ति समस्त विरोधों एवं शत्रुता को त्याग देता है। गुरमुख व्यक्ति सांसारिक लेखे-जोखे से ऊपर उठ जाता है अर्थात् इस संसार के जीवों से उसे क्या लाभ-हानि हुई, इससे उसे कोई सरोकार नहीं रह जाता। इस कारण वह न मोह में फंसता है और न ही किसी से होने वाले नुकसान के कारण उससे वैर-विरोध अथवा बदले की भावना रखता है। वह समस्त लेखे-जोखे (हिसाब-किताब) से मुक्त हो जाता है। गुरमुख व्यक्ति ईश्वर-भक्ति में लीन रहता है। श्री गुरु नानक पातशाह पावन फरमान करते हैं कि गुरमुख व्यक्ति ही वास्तव में अपने मालिक प्रभु को पहचान लेता है।

वस्तुत: गुरु के सम्मुख रहने वाला व्यक्ति सम्पूर्ण ग्रंथों का ज्ञान हासिल कर लेता है। गुरु के आदेशानुसार चलने वाले गुरमुख-जन को ईश्वर की सर्वव्यापकता का बोध सहज ही हो जाता है। गुरमुख व्यक्ति की किसी से किसी तरह की दुश्मनी नहीं होती। वह वैर-विरोध से पूर्णतया रहित है। वह अपने साथ हुए किसी तरह का अन्याय एवं अत्याचार करने वाले को हृदय से क्षमा कर देता है। बाबा शेख फरीद जी की पावन बाणी का संदेश है :

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥

(पन्ना १३८१)

गुरबाणी हमें हमारे साथ बुरा करने वालों का भी भला करने का पावन उपदेश देती है, जिसके

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३*

फलस्वरूप मन-तन से जीव निरोग रहता है और ईश्वर की रहमत से सब कुछ प्राप्त कर लेता है।

स्पष्ट है कि गुरमुख व्यक्ति ईश्वर को पहचान लेता है और उसकी सर्वव्यापकता का बोध उसे सदैव बना रहता है। वह किसी का बुरा सोच ही नहीं सकता।

बिनु गुर भरमै आवै जाइ ॥
बिनु गुर घाल न पवई थाइ ॥
बिनु गुर मनूआ अति डोलाइ ॥
बिनु गुर त्रिपति नही बिखु खाइ ॥
बिनु गुर बिसीअरु डसै मरि वाट ॥
नानक गुर बिनु घाटे घाट ॥३८ ॥ (पन्ना ९४२)

३८वीं पउड़ी में गुरु जी ने समझाया है कि जब तक जीव गुरु-दर्शाये मार्ग पर नहीं चलता तब तक वह मोह-माया की जकड़ में रहता है। किसी भी तरह का यत्न जीव को इस मार से बचा नहीं सकता।

गुरु पातशाह इस पउड़ी में पावन फरमान करते हैं कि गुरु की शरण में आए बिना मनुष्य माया में गलतान रहता है और इसी भटकाव के कारण बार-बार जन्म लेता है तथा मृत्यु को प्राप्त होता है। गुरु के बिना जीव की मेहनत सफल नहीं होती अर्थात् गुरु-शरण के बिना जीव की मेहनत बेकार जाती है, क्योंकि वह उचित जगह एवं सही दिशा में नहीं की गई होती। उसके साथ मनुष्य का अहंकार भी जुड़ा रहता है। मन अत्यधिक चंचल प्रवृत्ति का होने के कारण बहुत ही डगमगाता रहता है। गुरु-विहीन व्यक्ति कभी संतुष्ट नहीं होता, क्योंकि उसके पास संतोष रूपी धन नहीं होता। गुरु के बिना माया रूपी सर्प उसे डसता ही रहता है, जिसके फलस्वरूप मनुष्य जीवन-राह में ही खत्म हो जाता है अर्थात् उसकी आत्मिक मौत हो जाती है। सतिगुरु के हुक्मानुसार न चलने से जीवन में नुकसान ही नुकसान है।

जिसु गुरु मिलै तिसु पारि उतारै ॥
अवगण मेटै गुणि निसतारै ॥
मुकति महा सुख गुर सबदु बीचारि ॥
गुरमुखि कदे न आवै हारि ॥
तनु हटड़ी इहु मनु वणजारा ॥
नानक सहजे सचु वापारा ॥३९ ॥ (पन्ना ९४२)

३९वीं पउड़ी में श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं कि जिस मनुष्य को जीवन में सतिगुरु की प्राप्ति हो जाती है वह अपने शरीर को दुकान बना कर, मन को व्यापारी बना कर, माया के मोह से निर्लेप रह कर नाम का व्यापार करता है। माया के बंधनों से मुक्त होकर वह संसार रूपी भवसागर से पार उतर जाता है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जिस मनुष्य को सतिगुरु मिल जाता है वह जीव भवसागर से पार उतर जाता है। गुरु जीव के अवगुण मिटा कर गुणों के माध्यम से जीव का उद्धार करता है। यह सतिगुरु की महिमा है जो जीव को विकारों से बचा कर गुणों से मालामाल कर देती है, जिसके फलस्वरूप जीव का उद्धार सहज ही हो जाता है। गुरु-शबद के चिन्तन से अर्थात् गुरु-शबद की विचार-मात्र से महान सुख अर्थात् मुक्ति की प्राप्ति होती है। गुरमुख व्यक्ति को जीवन में कभी हार का मुंह नहीं देखना पड़ता।

वह जीवन रूपी बाजी जीत कर ही जाता है। श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं कि गुरमुख-जन अडोल रहकर ईश्वर के नाम का व्यापार करते हैं अर्थात् सहज अवस्था में रहकर ही सत्य का व्यापार होता है।

गुरबाणी में अन्यत्र भी श्री गुरु नानक देव जी ने प्रत्येक जीव को व्यापारी मानते हुए बड़ा सुंदर समझाया है कि हमें ईश्वर ने श्वास रूपी बेशकीमती पूंजी दी है। इससे हमें उत्तम व्यापार करना है। परमात्मा रूपी व्यापारी बड़ा बुद्धिमान है। वह जीव के सच्चे सौदे को पूरी तरह सम्भाल लेगा। परमेश्वर के गुणानुवाद का सच्चा सौदा यहां से लेकर चलें, जिससे मालिक हमें प्रसन्नता की दृष्टि से देखेगा :

वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु समालि ॥
तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि ॥
अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि ॥१ ॥
भाई रे रामु कहहु चितु लाइ ॥
हरि जसु वखरु लै चलहु सहु देखै पतीआइ ॥
(पन्ना २२)

वास्तव में शबद-गुरु के चिन्तन से ही जीवन के महान मकसद की समझ आती है। गुरु-दर्शाए मार्ग पर मन-वचन-कर्म से चल कर ही इस उद्देश्य की पूर्ति सम्भव है और इसी के फलस्वरूप ही लोक और परलोक सफल होते हैं। केवल धन-दौलत की बदौलत सुख और शान्ति मिलना मुमकिन होता तो कम से कम प्रत्येक अमीर व्यक्ति तो सुखी होता, लेकिन गुरबाणी आशयानुसार ऐसा हरगिज नहीं है। यह तो नेक नियति और नेक कमाई से ही सम्भव है।

गुरमुखि बांधिओ सेतु बिधातै ॥
लंका लूटी दैत संतापै ॥
रामचंदि मारिओ अहि रावणु ॥
भेदु बभीखण गुरमुखि परचाइणु ॥
गुरमुखि साइरि पाहण तारे ॥
गुरमुखि कोटि तेतीस उधारे ॥४० ॥ (पन्ना ९४२)

४०वीं पउड़ी में श्री गुरु नानक पातशाह ने पौराणिक उदाहरण देकर जीवात्मा एवं परमात्मा के बीच धन के कारण आई दूरी का वर्णन कर किस तरह गुरु के माध्यम से इस दूरी को दूर किया जा सकता है। इस रहस्य को बड़े सुंदर ढंग से समझाया है कि किस प्रकार त्रेता युग में जब श्री रामचंद्र जी को बनवास मिला, वहां से रावण सीता जी का हरण कर समुद्र पार लंका ले गया, श्री रामचंद्र ने समुद्र पर पुल बांधा, राक्षसों का वध कर लंका का दहन कर सीता जी को छुड़वा कर लाए। इस दौरान घर के भेदी विभीषण द्वारा दिये भेद से यह कार्य प्रवान चढ़ा।

ठीक इसी प्रकार माया में गलतान होकर जीव-स्त्री प्रभु-पति से दूर हो गई है। दोनों के मध्य संसार रूपी समुद्र की दूरी बनी है। पूर्ण गुरु ने शबद रूपी पुल बांधा और इस पुल (सेतु) की बदौलत जीव-स्त्री का प्रभु-पति से मिलाप हो सका। गुरु ने ही जीव-स्त्री को यह भेद बताया कि प्रभु से यह दूरी कैसे दूर हो सकती है। प्रो. साहिब सिंघ ने इस सन्दर्भ में बड़े सुंदर अर्थ किये है कि गुरु-शरण में आकर लाखों पत्थर-दिल इंसान संसार रूपी समुद्र से पार उतर जाते हैं।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि गुरमुख के लिए पारब्रहम परमेश्वर ने पुल बना दिया है अर्थात् ईश्वर ने गुरमुख व्यक्ति हेतु अपने लक्ष्य तक पहुंचने के लिए नाम रूपी सेतु का निर्माण कर दिया है। इसी नाम रूपी पुल के माध्यम से लंका लूटी गई और विकार रूपी दैत्य दुखी हो गए। श्री रामचन्द्र ने अंहकार रूपी रावण को मारा और विभीषण का भेद बताना रावण को मारने में कारगर सिद्ध हुआ। गुरु का शबद विकार रूपी रावण को मारने में सहायक सिद्ध होता है। सतिगुरु ने पत्थर-दिलों को भी नाम रूपी पुल के माध्यम से संसार-समुद्र से पार उतार दिया। करोड़ों का पारउतारा प्रभु-नाम से हुआ। गुरबाणी में अन्यत्र भी समझाया है कि गुरु के मतानुसार चलने से हम पांच विकारों से मुक्त हो जाते हैं, यथा गुरबाणी-प्रमाण है :

गुरमति पंच दूत वसि आवहि
मनि तनि हरि ओमाहा राम ॥ *(पन्ना ६९९)*

स्पष्ट है कि इस संसार रूपी अथाह भवसागर से पार उतरने हेतु हमें गुरु-सिद्धांतों एवं अमृतमयी बाणी रूपी सेतु की परमावश्यकता है, क्योंकि इनके बिना इस सागर से पार उतरना नामुमकिन है।

गुरमुखि चूकै आवण जाणु ॥
गुरमुखि दरगह पावै माणु ॥
गुरमुखि खोटे खरे पछाणु ॥
गुरमुखि लागै सहजि धिआनु ॥
गुरमुखि दरगह सिफति समाइ ॥
नानक गुरमुखि बंधु न पाइ ॥४१ ॥ *(पन्ना ९४२)*

४१वीं पउड़ी में श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं कि गुरमुख को खोटे एवं खरे कर्मों की पूर्णतया पहचान हो जाती है, जिसके फलस्वरूप वह खोटे कर्मों का त्याग कर नेक और खरे कर्म करता हुआ अपनी सुरति को ईश्वर-चरणों में टिका कर विकारों से पूर्णतया मुक्त हो जाता है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि गुरु के सम्मुख हुआ व्यक्ति अर्थात् गुरु के आदेशानुसार चलने वाला व्यक्ति आवागमन (जन्म-मरण) से पूर्णतया मुक्त हो जाता है। ऐसे गुरमुख-जन को प्रभु की दरगाह में मान-सम्मान मिलता है। गुरमुख व्यक्ति को खरे-खोटे की पहचान होती है अर्थात् उसे सही और गलत का निर्णय लेने की विवेक शक्ति प्राप्त होती है। गुरमुख व्यक्ति का ध्यान (सुरति) स्वाभाविक रूप से परमेश्वर के चरणों में जुड़ा रहता है। वह अडोल अवस्था में रहता है और किसी भी परिस्थिति में उसका मन डगमगाता नहीं। श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं कि गुरमुख व्यक्ति के जीवन-मार्ग में किसी तरह की कोई रुकावट नहीं आती।

उपरोक्त पउड़ी में गुरु साहिब ने मनन करने वालों की अवस्था को बयान किया है। जपु जी साहिब में भी समझाया गया है कि मनन करने वालों की अवस्था को कोई बयान नहीं करता, केवल गुणी-जन बैठ कर इस संदर्भ में विचार कर सकते हैं :

मंनै मारगि ठाक न पाइ ॥
मंनै पति सिउ परगटु जाइ ॥

मंनै मगु न चलै पंथु ॥
मंनै धरम सेती सनबंधु ॥ (पन्ना ३)

गुरमुख-जन को जीवन-मार्ग में कोई अड़चन नहीं आती :

गुरमति मति अचलु है चलाए न सकै कोइ ॥
(पन्ना ५४८)

गुरबाणी आशयानुसार गुरमुख अचल बुद्धि वाला होता है और समस्त कर्मकांडों से रहित उच्च अवस्था का मालिक होता है।

वास्तव में जिस जीव को सही और गलत की पहचान हो जाये वह गुरु-कृपा से सही मार्ग पर हंस प्रवृत्ति के अनुसार चलता हुआ अपना जीवन सफल बना लेता है।

गुरमुखि नामु निरंजन पाए ॥
गुरमुखि हउमै सबदि जलाए ॥
गुरमुखि साचे के गुण गाए ॥
गुरमुखि साचै रहै समाए ॥
गुरमुखि साचि नामि पति ऊतम होइ ॥
नानक गुरमुखि सगल भवण की सोझी होइ ॥४२ ॥
(पन्ना ९४२)

४२वीं पउड़ी में गुरु जी ने पुन: गुरमुख-जन की उच्चावस्था का वर्णन बड़े मनोरम ढंग से किया है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि गुरमुख व्यक्ति ही माया के प्रभाव से रहित परमेश्वर का नाम प्राप्त करता है। गुरमुख ही गुरु-शबद के माध्यम से अहंकार को जलाकर नष्ट कर देता है। गुरु के सम्मुख होकर ही गुरमुख सच्चे प्रभु के गुण गायन करता है। गुरमुख वाहिगुरु में लीन रहता है। सत्य नाम के माध्यम से गुरमुख को सर्वोत्तम सम्मान मिलता है। अन्तिम पंक्ति में श्री गुरु नानक पातशाह समझाते हैं कि गुरमुख व्यक्ति को समस्त भुवनों (लोकों) की सूझ पैदा हो जाती है।

प्रभु-नाम को माया के प्रभाव से परे कहा गया है। जो इसे अपने मन में बसा लेता है उसका लोक-परलोक सहज ही संवर जाता है। जपु जी साहिब में भी ईश्वर-नाम को निरंजन स्वरूप बतलाया गया है:

ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ (पन्ना ३)

नाम एवं गुरु-वचन के आश्रय से भवसागर से पार उतरना सहज हो जाता है। नाम में अपूर्व शक्ति है। यह अमर है। इसे न तो जल डुबो सकता है और न ही चोर चुरा सकता है तथा न ही अग्नि जला सकती है :

गुर का बचनु बसै जीअ नाले ॥
जलि नही डूबै तसकरु नही लेवै
भाहि न साकै जाले ॥ (पन्ना ६७९)

प्रभु-नाम गुरमुख व्यक्ति की वास्तविक पूंजी होती है, जिसकी बदौलत वह प्रभु में समाया रहता है और उसे समस्त लोकों की सूझ स्वाभाविक रूप से प्राप्त हो जाती है। लोक-परलोक में उसकी शोभा होती है। प्रभु-नाम की महिमा अनंत है।

कविता

श्री गुरु नानक देव जी

–स. करनैल सिंघ सरदार पंछी*

किया विज्ञान के युग का नया, आगाज़ नानक ने।
दलीलों को भी बख़्शा रुतबा, सरफराज़[1] नानक ने।
अक़ीदा क्या है, मज़हब क्या है, 'मरदाने' रबाबी का?
फ़क़त स्वर ताल के दम पर, चुना हमसाज़ नानक ने।
पड़ोसी हो अगर भूखा, निवाला बांट कर खाना,
दिया आदम को इन्सां होने का, अंदाज़ नानक ने।
कोई जल छिड़के उससे प्यास सूरज की नहीं बुझती,
अजब-सी ऐसी पूजा को किया, नासाज़[2] नानक ने।
हज़ारों बार बोलो झूठ, फिर भी सच नहीं होगा,
कलाम अपने को ऐसे कर दिया, जांबाज़[3] नानक ने।
कमाई नेकी की से जो बनी रोटी ही खाई थी,
था मेहनतकश भाई लालो, किया मुमताज़[4] नानक ने।
लिखा औरत के हक़ में जो वो तो होगा फ़तवा,
उसे सबकी नज़र में कर दिया, मुमताज़ नानक ने।
हलाल अस्त ख़ून-पसीने की कमाई खाना ही 'पंछी',
किया मेहनतकशी को इस तरह, मुमताज़ नानक ने।

१. सरफ़राज़= उच्चतम, २. नासाज़= ग़लत,
३. जांबाज़= तीव्र, ४. मुमताज़ = सम्मानित किया गया

*जेठी नगर, मलेरकोटला रोड, खन्ना-१४१४०१ (लुधियाना) पंजाब, फोन : ९४१७०-९१६६८

ख़बरनामा

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को कमज़ोर करने की कोशिश न करे कैप्टन सरकार : भाई लौंगोवाल

श्री अमृतसर : ३० जनवरी : सिक्ख पंथ की सिरमौर धार्मिक संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को तोड़ने के लिए पंजाब की कांग्रेस सरकार की तरफ से चली जा रही चालों से कांग्रेस का सिक्ख विरोधी चेहरा एक बार फिर से नंगा हो गया है। इससे साफ सिद्ध हो गया है कि कैप्टन सरकार सिक्ख मसलों को जानबूझ कर उलझाना चाहती है। सिक्ख पंथ पंजाब की कांग्रेस सरकार की चालों को कामयाब नहीं होने देगा और सिक्ख संस्था को कमज़ोर करने वाली सोच का हर स्तर पर मुंहतोड़ जवाब दिया जायेगा। इन शब्दों का प्रकटावा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने जारी एक प्रेस बयान में किया है। उन्होंने कहा कि पंजाबी के एक अखबार में पंजाब सरकार की उस मंशा का स्पष्ट खुलासा किया गया है, जिसमें कैप्टन अमरिंदर सिंघ की सरकार शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का दायरा घटा कर हरियाणा सिक्ख गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के गठन को सही कदम बताने की कोशिश में है। भाई लौंगोवाल ने कहा कि हरियाणा सिक्ख गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का मामला उठते ही शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी और शिरोमणि अकाली दल ने इसका ज़ोरदार विरोध किया था। आज भी इससे सम्बन्धित सुप्रीम कोर्ट में केस चल रहा है, परंतु पंजाब की मौजूदा सरकार जानबूझ कर सिक्ख संस्था को तोड़ने की कोशिश कर रही है।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान ने कहा कि सिक्खों के धार्मिक मसलों में पंजाब की कांग्रेस सरकार की तरफ से दख़लंदाज़ी बरदाश्त नहीं की जा सकती। उन्होंने कहा कि शायद कैप्टन अमरिंदर सिंघ शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की स्थापना का इतिहास भूल गए हैं। उनको पता होना चाहिए कि इसका गठन करने के लिए पंथ को बड़ी कुर्बानियां देनी पड़ी थीं। इस संस्था के कारण ही गुरु-घरों का प्रबंध संगत के हाथों में सुरक्षित है। भाई लौंगोवाल ने कहा कि किसी भी प्रांतीय सरकार को कोई अधिकार नहीं है कि वह शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के मामलों में दख़ल दे। यह एक खुदमुख्तार संस्था है, जो सिक्ख गुरुद्वारा एक्ट-१९२५ के माध्यम से गुरुद्वारा साहिबान का प्रबंध देखती है। इसकी चुनाव-प्रक्रिया सहित हर तरह के संशोधन और दिशा-निर्देश का अधिकार-क्षेत्र केवल भारत सरकार के पास है। कैप्टन सरकार को अपने दायरे में रहना चाहिए। उन्होंने कैप्टन अमरिंदर सिंघ को नसीहत दी कि वे केवल अपनी सरकार की सीमा में रहते हुए पंजाब के लोगों की भलाई की तरफ ही ध्यान दें, न कि सिक्ख-शक्ति को कमज़ोर करने के लिए चाल चलें।

भाई लौंगोवाल ने अमेरिका में सिक्ख पर हुए हमले की सख़्त शब्दों में की निंदा

श्री अमृतसर : ६ फरवरी : अमेरिका के राज्य कैलिफोर्निया की सेंटा कलारा काउंटी के एक डिप्टी शैरिफ स. सुखदीप सिंघ (गिल्ल) पर बंदूकधारियों द्वारा किये गए हमले की शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के

प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने सख़्त शब्दों में निंदा की है। भाई लौंगोवाल ने कहा कि विदेशों में सिक्खों पर हो रहे नसली हमले अल्पसंख्यकों के अंदर असुरक्षा की भावना पैदा कर रहे हैं। ताज़ा घटना में पुलिस अधिकारी पर हुआ हमला और भी चिंता का विषय है। उन्होंने कहा कि सिक्ख जिस भी देश में बसे हैं वहां के विकास में उन्होंने अहम योगदान दिया है। सिक्ख सबका सत्कार करते हैं और ज़रूरतमंदों की सहायता के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं। ऐसे हमले चिंताजनक हैं। सम्बन्धित देशों की सरकारों को योग्य कार्यवाही करनी चाहिए। भाई लौंगोवाल ने भारत के विदेश मंत्री को विदेशों में हो रहे नसली हमलों के प्रति सचेत होने के लिए कहते हुए विदेशों में बसते सिक्खों की जान-माल की रक्षा के लिए योग्य कदम उठाने के लिए कहा है।

सन् १९८४ के सिक्ख कत्लेआम के सभी दोषियों को मिले सख़्त सज़ा : भाई लौंगोवाल

श्री अमृतसर : १६ जनवरी : सन् १९८४ में दिल्ली सहित अन्य शहरों में किया गया सिक्ख कत्लेआम अमानवीय घटनाक्रम का शिखर था, जिसके सभी दोषियों को सख़्त सज़ा मिलनी चाहिए। यह बात शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने सन् १९८४ के सिक्ख कत्लेआम से सम्बन्धित जस्टिस एस. एन. ढींगरा के नेतृत्व वाली एस. आई. टी. द्वारा अपनी जांच-रिपोर्ट दिए जाने पर प्रतिक्रिया देते हुए कही। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान ने कहा कि सन् १९८४ में विभिन्न रेलवे स्टेशनों पर सिक्ख यात्रियों को रेलगाड़ियों में से उतार कर उनकी हत्या की गई और हैरानी की बात है कि न ही किसी ने सिक्खों को बचाया और न ही किसी व्यक्ति को गिरफ़्तार किया गया। उन्होंने कहा कि जस्टिस ढींगरा कमेटी द्वारा दी गई रिपोर्ट में साफ़ हो गया है कि १ और २ नवंबर, सन् १९८४ को दिल्ली के पांच रेलवे स्टेशनों पर सिक्खों की नसलकुशी की गई। इसमें यह भी स्पष्ट हुआ है कि पुलिस ने अपनी बनती जिम्मेदारी नहीं निभाई। न ही घटनाक्रम अनुसार और न ही अपराधक्रम अनुसार एफ. आई. आर. दर्ज की गई। इसके अलावा कई-कई शिकायतों को एक एफ. आई. आर. में ही सम्मिलित कर दिया गया। भाई लौंगोवाल ने मांग की कि इन मामलों में सिक्ख कत्लेआम के दोषियों को सलाखों के पीछे धकेला जाये। उन्होंने कहा कि ३५ वर्ष बाद भी अभी तक सिक्ख इंसाफ़ के लिए संघर्ष कर रहे हैं। भाई लौंगोवाल ने मांग की कि इस जांच-रिपोर्ट के आधार पर सन् १९८४ के सिक्ख कत्लेआम में सिक्खों को इंसाफ़ दिया जाये। भाई लौंगोवाल ने कहा कि देश की आज़ादी के संघर्ष में ८५ प्रतिशत से अधिक कुर्बानियां करने वाले सिक्खों के कातिलों को लम्बा समय बीतने के बाद भी सज़ा से दूर रखना देश के लोकतंत्र पर सवालिया निशान है। उन्होंने कहा कि सिक्ख कत्लेआम का हर दोषी सख़्त सज़ा का हकदार है। इसमें अब और देरी नहीं होनी चाहिए।